

डिजिटल संस्करण

तुम्ही से 2016-1

तुम्ही से

प्रथमांक
हेमंत 2016

Tumhi se

Hindi Literary Magazine

तुम्ही से 2016-1

इ
स

अं
क

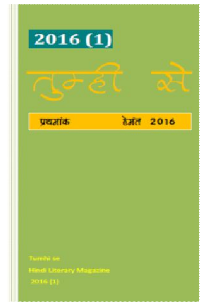
में

इस अंक में

स्थाई स्तम्भ

प्रस्तुत अंकः समझ और अनुभूति


डिजिटल संस्करण



बाह्य ज्ञान केवल समझ (understanding) का ज्ञान है. यह हमें निष्ठुर बनाता है. यह तकनीकी हो या बौद्धिक हमें प्रकृति को लूटना सिखाता है. यह हमें मानवता का शोषण करने की आज़ादी देता है. अपने ज्ञान के बल पर हम कम ज्ञानवान लोगों को लूटते हैं. बाह्य ज्ञान का आधार है - प्रत्यक्षवादी तत्वदर्शन. इस दर्शन ने नैतिकता निष्ठा आदि मानवी आदर्शों की गरिमा को एक कोने पर उठाकर रख दिया है । तात्कालिक लाभ ही सब कुछ बन गया है. भले ही उसके लिए कितनी ही प्रवंचना और निष्ठुरता क्यों न अपनानी पड़े। लगता है वर्तमान की विचारधारा मनुष्य को पशु बनने जा रही है. जिस पर मर्यादाओं और वर्जनाओं का कोई अंकुश नहीं होता। अनुभूति एक अलग तरह का ज्ञान है. जिस से हमें अंतर का दर्शन होता है. हम बाह्य जगत से प्राप्त ज्ञान की अंतर की बुद्धि से परीक्षा करते है. अनुभूति एक अपरोक्ष ज्ञान है.

भारतीय दर्शन कहता है- ज्ञान तीन तरह का है. प्रत्यक्ष (direct sensory perception) ज्ञान हमें भौतिक संसार से जोड़ता है. परोक्ष यानि (indirect, deductive knowledge or

understanding) ज्ञान हमारे मन व बुद्धि द्वारा समझा बाह्य ज्ञान ही है. बाह्य ज्ञान लगातार बुद्धि विवेचना की मांग करता है. लेकिन बहुदा हम एक बार बुद्धि द्वारा समझी बात को दोबारा समझने जानने का प्रयत्न नहीं करते और भ्रांतियों का शिकार होते हैं. अपरोक्ष ज्ञान (Extra sensory Intuitive perception of subtle) हमारे अंतर में व्यापत "आत्म ज्ञान" है जो हमें भाव शक्ति से प्राप्त होता है. जितनी सूक्षम हमारी भाव शक्ति होगी उतना ही सूक्षम अपरोक्ष ज्ञान हमें हासिल होगा.जब हम कोई भाव पूर्ण लेख कविता पढ़ते हैं तब हमें अंतर दृष्टि का आभास होता है. हम अपने अंदर या बाहर घटित क्रियायों के 'साक्षी' बनते हैं. यह साक्षी या आब्जर्वर ही शक्ति है जो स्वयं को ऑब्ज़र्व करती है. इस क्रिया में साक्षी जब स्वयं को ऑब्ज़र्व करता है तो धीरे धीरे यह हमारी आत्मा का साक्षी बन जाता है. आज के मानव की प्रमुख समस्या है बाहर से प्राप्त व विवादित विचार-विकृतियो, भ्रांतियो का घटाटोप और कुविचार. अनैतिक या झूठ परपंच भरे विचारों को ही कुविचार की संज्ञा नहीं दी जाती बल्कि पूरी ईमानदारी से झूठ का प्रचार करना भी कुविचार है. ये विचार हमें ऊपर से सक्रिय बनाते हैं. हम विचार की जड़ में जाने से कतराते हैं. हमें अति सक्रियता का शिकार होने के बजाय और बुद्धि या तर्क की बजाय अपने अस्तित्व के अनुभव करने हेतु अपना सम्पूर्ण ध्यान भाव पर केंद्रित करना है. अपने अस्तित्व के अनुभव करने हेतु हमें बाह्य सक्रियता की बजाय मौन व अंतर्मुखी सक्रियता चाहिए। जब कुछ क्षण हम मौन में होते हैं तो हमारा अस्तित्व आभाषित हो जाता है। प्रेम समभाव एवं आनंद की अनुभूति ही हमारी वास्तविक व सहज अनुभूति है। चिंतन एक रचनात्मक क्रिया है जो इस अनुभूति की सही अर्थों में प्राप्ति है.

निवेदन–स्वर्ण ओमकार

मुख्य पृष्ठ (कला) रैक्व स्वर्ण

तुम्ही से...

मानवीय चेतना का दर्पण

प्रथमांक हेमंत 2016



संपादक की कलम से

...मूलभूत प्रश्नों के हल किये बिना कोई व्यक्तिगत सामाजिक या आध्यात्मिक उत्थान नहीं हो सकता. ऐसा नहीं है कि हम रचनाकारों का यह ‘आम आदमी’ प्रचलित धार्मिक व राजनीतिक अर्थ-तंत्र को नही जानता या उस के बारे कोई व्यक्तिगत राय नही रखता या मार्गदर्षकों के तमाम लिखित अलिखित मार्ग दर्शन के बावजूद वह लगातार शोषण का शिकार हुये जा रहा है. ऐसा नहीं है. भारत की सर-जमीं पर पैदा हुया यह शख्स इतना गया गुज़रा पैदल दिमाग़ नहीं है. हमारे जैसे लाखों हज़ारों मार्ग दर्शकों को मार्ग दर्शन व प्रेरणा देने वाला यह ‘आम आदमी’ कुछ अपनी अंत्रीव विषमताओं व विवशताओं के जाल में उलझा हुया है.

...भरे-पूरे राजनीतिक बाज़ार का वह शिकार नहीं उपभोक्ता है. वह राजनीतिज्ञों का राजनीतिक इंधन ज़रूर है. लेकिन सवा सात अरब के इस घनघोर मानव जंगल में

वह भी तो अकेला है. उस के लिये प्रश्न अपने आस्तित्व को बचाये रखने का है. वह राजनीति में प्रसन्नतापूर्वक स्वयं को पेश करता है कि उसे भी अपनी घर व दुकान का छोटा सा राज्य चलाना है. वह भी उतना ही बड़ा राजनीतिक पैंतरेबाज़ है जितना बड़ा कोई देश का राजनीतिज्ञ. पर उस के अपने प्रिय पैंतरे उस की मानसिक दशा को कब दुर्दशा में बदल देते हैं उसे पता ही नहीं चलता....

...परमात्मा से उस का अपना गहरा व्यक्तिगत संबंध है. हर महान् मुश्किल घड़ी में वह उसका मसीहा है. उससे वह वह शक्ति प्राप्त करता है जो कोई भौतिक उपकर्ण उसे दे नहीं सकता. पर यहां भी वह राजनीति करने से बाज़ नहीं आता. थोड़े से व्यक्तिगत प्रबन्धन के बाद वह मुक्त भाव से अध्यात्म की सीड़ियां चढ़ने को लालायत हो उठता है. पर उसे ध्यान नहीं रहता कि उसका अपना व्यक्तिगत संसार उसके छल बुद्धि व कपट के इंधन बिना चल नहीं सकता. पर उसकी भोगी वृति उसे अध्यात्मक भोग को भी चख़ लेने का अवसर चूकने से रोकना नहीं चाहती.

...परमात्मा से उस का दूसरा गहरा संबंध डर का है. उस के लिये परमात्मा अभी भी अबूझ पहेली बना हुया है. वह समझता है कि परमात्मा उस का व्यक्तिगत शाषक है जिसने उसके सात्विक अपराधों का उसकी मानसिक दुर्बलतायों का ब्योरा रखा हुआ है. यह उसका विश्वाश है. उसकी यही दुर्बलतायें उसे धार्मिक बाज़ार में ला खड़ा कर देती हैं यहां वह सज़ा मुआफ़ी के लिये और शायद परमात्मा की अतिरिक्त अनुकंपा के लिये धर्म-गुरूओं, पुजारियों व धार्मिक

राजनीतिज्ञों के हत्थे चढ़ता है. यहां उसकी व्यवहारिक तर्क- शक्ति काम नहीं करती क्योंकि प्रश्न परमात्मा का है. उसे जानकारी नहीं कि ये लोग अपनी सज़ा मुआफ़ नहीं करवा सकते उसकी क्या करवायेंगे.

...'तुम्ही से' हमारा छोटा सा प्रयास है ऐसे ही अनेकों मूलभूत प्रश्नों को आपके समक्ष लाने का. इसका प्रथम अंक प्रस्तुत है. 'तुम्ही से' का साहित्य जगत में प्रवेष अभी प्रयोगात्मक स्तर पर है. अभी अच्छी अच्छी रचनायों की कमी है. ऐसे जवलंत प्रश्नों की चुनिन्दा रचनायें 'तुम्ही से' में प्रस्तुत करना हमारा निरंत्र प्रयास रहेगा. साहित्य पर्यावरण व अध्यात्म प्रेमी पाठक व लेखक गण का 'तुम्ही से' एक साझा मंच है. हमारा उन से हमारे प्रयास के अनुरूप अपनी चुनिंदा रचनायें भेजने का अनुरोध है.

...हम पति-पत्नि युगल साहित्य व अध्यात्म के रसिया हैं लेकिन विशुद्ध हिन्दी साहित्य से नितान्त दूर विज्ञान जगत की मेडिकल श्रेणी से जुड़े हैं. साहित्य के साथ अध्यात्म से हमारा तात्पर्य अगर कोई है तो यह वह अध्यात्म है जो कबीर दादु मीरा सरीख़े लोक-आत्मा चितेरे महा मानवों को आत्मसात किये स्वामि विवेकानन्दए महा-पंडित राहुल सांकृत्यायन, स्वामि राम तीर्थ से होता हुआ, इस इक्कीसवीं सदी में भी कवि कथाकारों के मन से बेमुहारा फूट पड़ता है. यह अध्यात्म लोक मन का अध्यात्म है. जब आज की कवि डा. कविता किरण कहती हैं - कब तलक काबा-ओ-काशी जायेगा क्या कभी ख़ुद की तरफ़ भी जायेगा तो वह लोक-मन में बसी-रसी अध्यात्मिकता की ही बात नहीं कर रहीं बल्कि यह कवि के निज-मन में प्रक्ट हुई अंत्रद्ष्टि बात करती हैं. हमारा दूसरा उदेष्य इसी अध्यात्मिकता के वैज्ञानिक आधार की खोज करना है.

'तुम्ही से' . कृष्णा स्वर्ण

तुम्ही से…

संक्षिप्त उदेष्य

विशुद्ध भौतिक्ता
अंत्रीव या बाह्य
विशुद्ध चेतना का प्रवाह
मन में देह में मष्तिष्क में
न कोई पूर्वाग्रह
धर्म या रीति का
न कोई पूर्व-निर्धारित शाश्त्र ज्ञान
मन या अध्यात्म का
न कोई मार्गदर्शन
न नतीजा या निष्कर्ष
केवल प्रश्न केवल प्रयत्न
तब तक
जब तक न हो चंचल मन सीमा पार
जाने को तैयार
जब तक न हो विशुद्ध चेतना का आभास
जब तक न मिले अंतिम अंत्र-दृष्टि

इंदु लेखी -संवाद -मुक्त

इंदु लेखी की कविता बनाम फूल की पत्ती

फूल की पत्ती से कट सकता है हीरे का जिगर

मर्दे नादाँ पर कलामे-नर्मो नाज़ुक बेअसर' --इक़बाल

इक़बाल द्वारा लिखित बलि -इ-जिब्रील के शुरू में भृतहरि के नीति शतक से लिए एक शलोक का मुक्त अनुवाद मिलता है.

"हीरे के जिगर को फूल की पत्ती से काटा जा सकता है. लेकिन किसी मूरख को सुन्दर प्रभावशाली नाज़ुक भाषा से समझाया नहीं जा सकता."

श्रीमती इंदु लेखी हिंदी साहित्य में एक स्थापित हस्ताक्षर है. वे नरमो - नाज़ुक, सांकेतिक भाषा की माहिर हैं. उन की कविता में सूक्षम भावों की भरमार रहती है. वे ज़िंदगी की गहरी से गहरी परतें इस तरह खोलती जाती हैं जैसे एक समर्थ धैर्यवान जो ज़िंदगी जीता भी है और कला पारखी की तरह ज़िंदगी की परख भी करता है. -संपादक

मैं ..और ...तुम
एक ही यात्रा
जी रहे थे ....
शब्द के जन्म लेते ही
यात्रा कब यातना बनी ......
कदम भीतर मुड़े
केंचुल अपनी अपनी
बचाने को ,
अब ....
मैं .. और.. तुम
उलटी दिशा में
दौडना जान गए हें
संवाद -मुक्त
अब हम
नहीं थोपना चाहते
अपने -अपने
मील-पत्थर ,...इंदु .

इंदु लेखी **- जिंदगी**



कतरन -सी यह जिंदगी

घूमे लेकर जेब में

कभी लगे रेशम -सी

कभी दिखे खुरदरी -सी ;

हिसाब करें फुर्सत में

तो उखड़ी -उखड़ी रहे ;

उलझे हों जंजाल में

तो भी बदहवास ही रहे ;

करे बात मुझसे '

अपनी कभी ना ;

जिद -जिद कर

फिर भी मेरी जेब में रहे ....

इंदु .

कायनात



-निरंजन "निरंजन"

अनंत काल से मैं इस के भीतर

बीज के रूप में विद्यमान था

गहन अंधेरे की छाती में

अंधेरे में खुद को पाल रहा अंधेर अंग था

मुद्दत बाद कोट युग बीतते बीतते

बल रहे बुझ रहे सूर्यों के बीच

मैं भी धुर से गया रोशनाया

मैंने सुहावी पृथ्वी को गले लगाया

लम्बी राहों का मैं राही

मेरा अस्तित्व हो रहा बृहद

लेकिन एक पुकार ब्रह्मांड की माँ

के जिगर को चीर रहीं

शुन्य में जन्मा शुन्य में पला

यद्यपि फ़ैल रहा सूर्य संग

तथापि रौशनी से मुंह मोडे पीठ किये

बीज से पौधा पौधे से पेड़ बन गया हूँ

कब मैं रौशनी पिऊंगा

कब श्रष्टा बन जिऊंगा

डा. कविता किरण की दो कवितायें



डा. कविता किरण

1.

चट्टानों पर पानी जब बरसा होगा
माटी का दामन कितना तरसा होगा
सागर भर कर भी न प्यासी रह जाउं
गागर के भीतर कोई डर सा होगा
बादल सोच रहा है अब के बारिश में
जाने कितनी बूंदों का खररचा होगा
कब आयेगा दिन जब मीठी झीलों में
रेगिस्तानों का न कोई चरचा होगा
किसने सोचा था यह जीने से पहले
इतना मुशकिल जीवन का परचा होगा
मेरे घर में आग लगाने वाले सुन
तेरा घर भी तो मेरे घर सा होगा

मैं! हां! मैं! एक हादसे की तरह इस दुनिया में आई! जिंदगी को जिसे अनचाहे झेलना पडा। मेरा स्वागत मुस्कुराहट ने नहीं, मातम ने किया। आँख खोलते ही दर्द की सांवली परछाइयों ने मुझे अपने वजूद में समेट लिया और शुरू हो गया चिंता से चिता तक का कांटों भरा सफर।

जिंदगी बहुत वाहियात चीज रही है मेरे लिए। इसे जीने में कभी सुकून महसूस नहीं हुआ। मैं तन्हाइयों के किले में कैद थी। आज भी हूं और मेरी दुनिया इसी किले की चहारदीवारी में सिमटकर रह गई। मेरे खयालों ने, मेरे जज्बातों ने कभी इन दीवारों को तोडने की, इनसे बाहर आने की कोशिश भी नहीं की।

हां! वक्त और उम्र के साथ कुछ ख्वाब जरूर आते-जाते मेरी आँखों के रोशनदान में चुप-से झांक गये और मेरे भीतर किसी दूसरे का अनजाना, अनपहचाना-सा वजूद छोड़ गये।

मैं उन डूबती हुई शामों का आईना रही हूं, जिसमें आसमान पर एक सुनहरी सुबह की तरह उगने की ललक है, लेकिन अफसोस ! वो शाम कभी उस सुबह का नाम अपने होठों पर नहीं ला सकी।

मैं उन अंधेरी काली रातों की अनजान राहों की मुसाफिर हूं, जो सिर्फ गमजदा लोगों लिए बनी है, जिनका आगाज तो है, पर अंत नहीं।

वक्त ने मेरे माथे पर बस एक ही लफ्ज लिखा है - 'आँसू'।

"औरतनामा से"--- -डॉ. कविता "किरण"

Visit blog: http://kavitakiran.blogspot.in/

2.

कब तलक काबा–ओ–काशी जायेगा
क्या कभी ख़ुद की तरफ़ भी जायेगा

हम–सफ़र होगी नेकी या बदी
साथ में पंडित न काजी जायेगा

इक हद तक इम्तिहां देने के बाद
सब्र का प्याला छलक ही जायेगा

क्यों मसीहा की लगाये हो उम्मीद
है न ऐसा ज़ख़्म जो सी जायेगा

ग़म न कर दम तोड़ते मेरे जिग़र
दर्द छूते ही तू जी जायेगा

इन हरे भरे पेड़ों से अमृत छीन कर
सोचते हो ज़हर वो पी जायेगा



भूपिंदर प्रीत की दो कविताएँ

(1) एक और मृत्यु

बच्चे ने पतंग उड़ाई
और डोर से कट गई पक्षी की गर्दन

आकाश यूँ ही हिलता रहा
पतंगों के बीच

धरती पर गिरा पक्षी
जिसे गिरते ही
उसके अपने पंखों ने दे दिया कफ़न

दूर से देखता था एक पेंटर
उस की आँखों में रह गया
खून से भीगे पक्षी का दृश्य

उसे दुःख मिल गया
अगली पेंटिंग के लिए

धरती को देर तक रहने के लिए
एक और साथ

प्रेम को गहरा होने के लिए
एक और मृत्यु

(2) अनकही के लिए

पूछना नहीं चाहता कुछ भी तुमसे
पूछने से पक्षी उड़ जाते हैं.

डरता हूँ
मेरे अंदर से कहीं तुम्हारी छाया
गिर न पड़े

लग न जाये चोट कहीं
पक्षी को

मेरे सूखे पत्तों की सरसरहट से जो तुम्हारी
आवाज़ चलती है
कहीं रुक न जाये

कहना भी नहीं चाहता
कहने से
कवितायेँ जनम लेना बंद कर देती हैं

अपने इस डर को माया जाल समझ
फ़ेंक देना चाहता हूँ ख़ामोशी पर

ख़ामोशी से घोँसले बनते हैं
अनकही के लिए

भूपिंदर प्रीत की कविता

भूपिंदर प्रीत की कविता बहुत गहरे अर्थ लिए रहती है. वे पंजाबी के कवि हैं. जैसे शाम के धुंधलके में सभी रंग एक रंग से हो जाते हैं और गहरा जाते हैं. वे कविता को एक जीवन पद्धिति की तरह लेते हैं. उन के लिए जीन और कविता कहना कोई दो बातें नहीं. उन की कविता चाकू की नोक पर चलती है. वे शब्दों को तीखा किये रखते हैं. उन्हें बर्बाद नहीं होने देते. उन की कविता जीने के नए आयाम तलाशती है. प्रस्तुत हैं भूपिंदर प्रीत की हिंदी में लिखी दो कवितायेँ.

पेशावर की रात - तृषि शर्मा

(2014 पेशावर स्कूल आक्रमण एक आतंकवादी आक्रमण था जो पाकिस्तान के पेशावर शहर के आर्मी पब्लिक स्कूल में 2014 दिसंबर 16 को तहरीक-ए-तालिबान पाकिस्तान से आवद्ध 7 आतंकवादी स्कूल में घुस गए और वहाँ के विद्यार्थी कर्मचारी पर अन्धाधुन्द गोलीबारी कर 145 लोगों की जान ली. जिन में ज्यादा स्कूल में पढ़ने वाले बच्चे थे. तृषि शर्मा की यह भावपूर्ण कविता उस त्रासदी की याद दिलाती है. तृषि शर्मा एक मेडिकल स्टूडेंट हैं. - संपादक.)

नन्हे नन्हे कदमों की चहलकदमी सिमट गई,
धक् धक् करती धड़कन भी आज देखो शांत हुई
अम्मी अम्मी कहते हुए जो जुबां थी फिसल रही,
आज वो तोतली बोली भी किसी कोने में छिप सी गई
अब्बा के कंधो की शान थी वो लूट गई,
आपा के प्यार की गुहार भी आज बेकार हुई
आज उन आँखों की चमक भी है रुसवा हुई,
जब साँसे हवाओं के साए मे फ़ना हुई
आज उन माँ बाप की हस्ती है मानो मिट सी गई,
जिनको औलाद है लाशों मे तबदील मिली
इन कब्रों पर तो फूल भी रोकर मुरझा जाए,
मासूम सी हंसी भी रुसवाई के आंसू बहा जाए
ये क्या कहर उन खुदा के बन्दों ने ढाया है,
जो बेक़सूर बच्चों को ही मोहरा बनाया है
हालात ये कोई नए नहीं है,



आसमां से उतरे या ज़मीं से उपजे नही है
इनकी जड़ें तो हम मे ही कहीं दबी है,
जंग मे लिपटी शान्ति या शान्ति मे लिपटी जंग जो बनी है
शान्ति का पैगाम तो देते हम सभी है,
पर अपनाएगा कौन इस से अनजान भी हम ही है
भगत सिंह जन्मे फिर से ऐसा तो सब चाहते है,
पर आँगन हो दूसरों का, अपना चिराग क्यों कोई शहीद करें
शान्ति राई जितनी है चाहे पर पहाड़ जितनी जरूरी है,
ईर्ष्या को गर्व में तबदील करने की भी तो कला है
गुस्से को भी मीठे वचनों में बयां करने की भी तो कला है,
मुश्किल के समय साथ निभाने की ये कला है
अपनेपन के एहसास को महसूस करने की ये कला है,
अँधेरी रातों में भी रौशनी की चिंगारी ढूँढने की ये कला है
डूबते सूरज की धीमी लौ को भी सलामी दे जाने की कला है,
हो शुरुआत जो बदलाव लाने की
कुछ भी तो नामुमकिन नहीं है, एक एक हाथ बढ़ाए सभी तो
सुधार हमीं से संबंधित है, शान्ति को हम फिर से रूह की ताकत बना देंगे
धीमी धीमी लौ को भी इतना रौशन कर देंगे, कि भाईचारे के एहसास में जंग की हस्ती मिटा देंगे
कि भाईचारे के एहसास में खुशियाँ हम फैला देंगे।

"पांच इन्द्रियों में तुम" - पल्लवी त्रिवेदी

(श्रवण)

आज सवेरे जब तुम्हे देख रही थी अपलक, परिंदों को दाना डालते हुए, छत पर दो गौरैया, तीन कबूतर और चार गिलहरियों से घिरे, उन्हें प्यार से टेर लगाकर बुलाते हुए तुम, अचानक एक गहरी और शांत आवाज़ में तब्दील हो गए थे और मैं लगभग ध्यान मग्न संसार के सारे स्वर मौन हुए और तुम गूंजने लगे मेरे देह और मन के ब्रम्हांड में एक नाद की तरह काटते रहे चक्कर मेरी नाभि के इर्द गिर्द मैं उस पल में एक योगिनी थी और तुम ओम... ओम...ओम



(स्वाद)आज दोपहर मौसम की पहली बारिश और बस ... तुमने देखा मुझे ऐसी तलब भरी निगाहों से मानो मैं चाय की एक प्याली हूँ ओह ...उत्तेजना से थरथरायी प्याली और टूट कर बिखर गयी एक गर्म आगोश में और ठीक उस वक्त जब तुम ले रहे थे बागान की सबसे कोमल पत्तियों की चुस्कियां मैं तलबगार हुई एक अनचीन्हे नशे की और तुम उस क्षण बने मेरे लिए अंगूर का महकता बाग़ ढेर से रसीले अंगूर मैंने कुचले , चखे और डूबकर बनायी दुनिया की सबसे बेहतरीन शराब अब आँखें बंद कर घूँट घूँट चखती हूँ तुम्हे. नशा -ए -मुहब्बत बढ़ता जाता हर बूँद के साथ...

(स्पर्श) पूरी ढल चुकी शाम के बाद बुझ चुके सूरज की राख जब उदासी बनकर जमा हो रही थी चेहरे और निगाहों पर तुम बन गए थे एक रेशमी रूमाल मेरी छलछलाई आँख को समेटते , उदासी की राख पोंछते तुम उस पल एक मुलायम छुअन थे , हंस का एक उजला मुलायम पंख थे , किसी नवजात की नर्म हथेली थे तुम स्वाति की पहली बूँद थे, बेचैन पपीहे पर बरस रहे थे ....

(दृश्य) आधी रात नींद खुली और देखा तुम टेबल पर झुके कोई कविता बुन रहे थे लैम्प की उस पीली रौशनी में तुम बन गए प्रकृति की एक विराट पेंटिंग सोचते हुए ललाट पर चार गहरी सिलवटें जैसे सूरज से निकलती पहली किरणें जिसकी गुनगुनी गर्माहट में गेंहू की बाली की तरह पकती थी कविता , प्रेमिल आँखों में देर से टिकी एक बूँद जो बाद में कविता की किसी पंक्ति में ही गुम हो गयी थी मद्धम लयबद्ध साँसों में महकती थी वो सुनहरी गेंहू की बल्ली मैं देखती रही अडोल उस अलौकिक चित्र को फिर मैं उस चित्र पर झुकी और अपना नाम लिख दिया एक पीले चुम्बन से .... मैं मेरी चार इन्द्रियों से चार पहर तुम्हे महसूसती हूँ और पांचवी ?

(गंध) जब जब सांस लेती हूँ तुम बन जाते हो तुम्हारी ही तुर्श महक जो फूटती है तुम्हारी देह से और समाती है मेरी रूह में......

बहसों और विमर्शों के इस महा भयंकर दौर में जब चारों ओर चिल्लपों सी मची दिखाई देती है , ज़ुबां मेरी भी लपलपा कर एक कमेन्ट फेंक देना चाहती थी दिमाग मेरा चाहता था उन बहसों का सरताज बन जाना और दूसरों के गले में आरोपों की माला डाल सबसे "सहिष्णु " कहलाया जाना वक्त का तकाज़ा कि ऐसे सुलगते दौर में स्थगित कर दूं पोस्ट करना मिस्टर बीन के शो और प्रेम के गद्य पद्य भेजा बड़ा गिल्टी फील कराता है यार मगर दिल मेरा बड़ा आलसी और बेज़ार ऊबा हुआ और उकताया हुआ इन पचड़ों से कभी कभी उबकाई की हद तक यार दिल चल तू ही सही अब के फिर तेरी ही सही दिमाग को एक एस्पिरिन खिलाई और कम्बल में दुबका कर सुला दिया और फिर इन तमाम बहसों से भरे पेज में मैंने इत्तू सी जगह बनायी एक प्रेम कविता की बड़ी बड़ी बौद्धिक चर्चाओं के नगाड़ों के बीच मेरी मरियल सी प्रेम कविता न केवल असंगत बल्कि बेमानी सी भी एक दूर से सुनाई देती चिड़िया की बारीक आवाज़ सी जानते हुए भी कि गुज़रना होगा इल्जामों के बोगस रास्ते से गलत समय में पैदा होने का भुगतना होगा हर्जाना "लग जा गले " का दूसरा अंतरा सुनते हुए मैं उस कमज़ोर सी कविता का सर सहलाती हूँ मेरी कविता पूरी ठसक के साथ सर को झटका देती है और कहती है " मैं रहूंगी यहीं , मरूंगी यहीं और बचूंगी भी यहीं "

~~~~ पल्लवी त्रिवेदी

संकलन: राजेश पराशर
~~~~

लक्ष्मण- रेखा(लघुकथा)



शाम को देश के हर शहर की तरह मेरे शहर के बाज़ारों में भी बहुत भीड़ होती है। बाज़ार की सड़क के दोनों तरफ खड़ी गाड़ियां के बीच रह गई सड़क पर हर कोई तेज़ी से आगे निकलने की कोशिश करता दिखाई देता है।चाहे वो पैदल,टू-व्हीलर रिक्शा,साईकल व कार पे सवार हो, आज मैं भी तेज़ी से हर तरह की भीड़ को चीरता हुआ, बस स्टॉप की और बढ़ रहा था,मगर मेरा शरीर साथ नहीं दे रहा था। इस लिए लोकल बस का इंतजार करना मेरे लिए मुश्किल हो रहा था। थ्री- व्हीलर स्टॉप आते ही मैं रुक गया। वहाँ मेरी कालोनी को जाने वाले एक थ्री- व्हीलर खड़ा था, वैसे मैं थ्रीविलर पर बहुत कम ही गया था, मगर आज ......।

थ्री- व्हीलर में अभी दो सवारियाँ आ के बैठी थी। मैं भी थ्री- व्हीलर में बैठ गया। थ्री-व्हीलर के पास ही एक पतले शरीर की लडकी खड़ी थी, सवारियाँ उसे देखते हुए, धीरे धीरे थ्री- व्हीलर में बैठती जा रही थी।मगर वह लड़की न ही इस पर और न ही किसी और थ्री-व्हीलर पर बैठ रही थी। मेरे मन मे उस के बारे कई तरह के सवाल पैदा हो रहे थे। और कुछ के जवाब मुझे खुद से ही मिल रहे थे। मगर वहाँ खड़ी लड़की के सबंध में अजीब ख्याल उठ रहे थे। जिनको रोकने की कोशिश करता, मगर सफल न हो पाता।

शायद दूसरी सवारियाँ भी उस लड़की के बारे मेरी तरह ही सोच रहीं होंगी ,इतने में थ्री- व्हीलर पूरी तरह भर गया। ड्राईवर के साथ वाली सीट पर एक आदमी अपने कुत्ते के बच्चे के साथ आ के बैठ गया, मगर वह लड़की पता नहीं किस सोच में गुम अभी भी वहाँ खड़ी थी। थोड़ी देर के बाद वह लड़की अचानक थ्री- व्हीलर के आगे से होती हुई ड्राईवर की सीट पर आ कर बैठ गई। सभी उस की तरफ देखने लगे। तब उसने थ्रीविलर स्टार्ट किया और वे आगे की तरफ चलने लगा। अब मुझे ऐसा लगा जैसे कोई मेरी सोच में खीचीं लक्ष्मण रेखा के उस पार पहुँच गया हो, और उसका थ्री- व्हीलर तेज़ी पकड़ने लगा।



- मोहन बेगोवाल

चलिये शाश्वत गंगा की खोज करें - स्वर्ण जे. ओमकार

देश में बहती है जो गंगा उसका कहना क्या?

वह पानी की धारा है या ज्ञान की. भई दोनों ही तो बह रही हैं साथ साथ, शताब्दियों से! आज इक्कीसवीं शताब्दि में लेकिन दृष्य कुछ और है. इस महान् देश की दो महान् धारायें अब शाश्वत नहीं, शुद्ध नहीं, मल रहित नहीं. धारा में फंसा है ज्ञान या ज्ञान में फंस गई है धारा! कौन जानें किस ने किस के बहाव को अवरूद्ध किया. ज्ञान तो था मार्ग दर्षक मानवीय चेतना का, मानवता की बुद्धि का. प्रखर करता था चेतना को, बुद्धि को. ज्ञान तो था केवल वाद और वाद थे महा.ज्ञान की महा.गंगा की महा धारायें. संवाद के वाहक और विवादों से दूर. अब ज्ञान तों ज्ञान की भ्रांति है मात्र! ज्ञान का अवशेष है केवल! ढेरों के ढेर शब्द ज्ञान, विद्यालयों, महा.विद्यालयों, विष्व. विद्यालयों से बहता हुआ. वादों संवादों को चर्चायों को गोष्ठियों को झेलता हुआ. मानवीय चेतना की निर्मल मंदाकिनी का रास्ता रोके बैठा है. शाश्वत सत्य की विशुद्ध धारा को बांधे बैठा है! मानवता की बुद्धि को भ्रमित किये हुए है. वह ज्ञान रौशनी नहीं चकाचैंध है केवल! पतंगों की भीड़ है. धन व ख्याति की लूट है. गंगा क्या कहे. इतने वाद जो इक्कट्ठे हो गये हैं और इतने संवाद कि लाउड स्पीकर कम पड़ गये हैं. स्टेजें पटी हैं व्याख्याकारों से पंडाल पटे हैं श्रोतायों से. आदमी वहीं रूका हुआ है. आत्मा वहीं खड़ी है. अंधेरा जितना अंदर है उतना ही बाहर! गंगा की तो मूक वाणि है कौन सुन पायेगा.



लाउड स्पीकरों से निकले वे सारे वाद पहले गंगा जी का सीना भेदेंगे. वे सारे लोक के प्रलोक के व्याख्याकार! वे परोक्ष अपरोक्ष ज्ञान के बांटने वाले! वे सारे नीति के ज्ञानवान! वे ज्ञान के नीतिज्ञ! जो कोई ज़रा सा भी ज्ञानि हो जाता है.बस सब से पहले अपना ज्ञान गंगा जी को दे

डालता है. ज्ञान की विस्तृत गंगा में अपना ज्ञान अर्पित करने नहीं फेंक डालने के अंदाज़ में कहता है.

हे गंगे! ... तुम तो ज्ञान की महासागर हो! मैं अपना तुच्छ ज्ञान तुझे अर्पित कर रहा हूं..!'अब श्री गंगा मइया बीच में सांस रोके बीमारों सा उच्चारण लिये रो पड़ती है. अभी और कितना डालोगे और कितनी सदियों तक. मेरे आर और मेरे पार बसने वाले मेरे 'बच्चों को ज्ञान की नहीं ज्ञान से निकालने की ज़रुरत है...! '

ज्ञानी चुप्प! गंगा उसे ऐसे संबोधित होगी! वह दिग्भ्रमित! हतप्रभ!! ...जन्मजात गूंगे सा!!! एक एक शब्द जोड़ कर कहता है

'आह! गंगे क्या कह दिया! क्या कह रही हो

गंगा जी की बीमार वाणि. 'पास आओ तो कुछ कहूं- बूढ़ी हो गई हूं. इतना साफ़ स्पष्ट नहीं बोल सकती जैसे तुम स्टेजों पर घंटों प्रवचन करते हो. शब्द कम हैं मेरे वो भी न सुन पाये तो... अपना हाथ दो और अपना कान भी..!'

ज्ञानी किंकर्तव्यविमूड़.. कुछ कहता नहीं. यंत्रवत बैठ जाता है गंगा जी के पास ठंडे जल की धारा जो मानव मल से धुंधली हो चुकी है उसकी देह और आत्मा दोनो को भिगो रही है!

श्री गंगा उवाच-'ऋषि मुनि लोगों ने ...मेरे बच्चे! वेदों की पुराणों की रचना की. मेरे किनारों पर ही उन्होंने ऑंखें खोलीं और यही पर उन की मन की ऑंखें खुलीं. उसी ज्ञान से समृद्ध हुए मेरे पानी. उसी पानी में घुले ज्ञान से सीची मैंने देश की धरती. इसी ज्ञान से समृद्ध हुआ मानव मन. पूरा चैगिरदा वातावरण. पर यह समूचा ज्ञान यह वेद पुराण मिल कर भी मानव मन को न बदल सके. मानव मन वैसा ही बना रहा-कपटी! लोभी! मोह-ग्रस्त! समझ में नहीं आता कपट और ज्ञान एक साथ कैसे रह लेते हैं मानव मन में! शताब्दी दर शताब्दी, वर्ष दर वर्ष, कपट ज्ञान बढ़ा शाश्वत ज्ञान कम हुआ. थोथा ज्ञान बढ़ा. आत्म-ज्ञान कम हुआ. तब उन मूलभूत तत्वों को देवत्व देने वाले, उन महा-मुनियों महा-ऋषियों को लगा-ज्ञान से

माया का नाश नहीं होगा! ज्ञान से माया आष्चर्यजनक ढंग से रुपांत्रित हो जाती है! ज्ञान से माया को और बल मिलता है! स्थूल की रचना करती है माया. सूक्षम को तजती जाती है. जितनी बड़ी व्याख्या माया की, उतना बड़ा माया का पासार! जितना बड़ा ज्ञानि उतना बड़ा माया का पुजारी! तो उन लोगों ने, वेदांत की रचना की. वेदांत यानि वेद का ज्ञान का अंत. ज्ञान से बाहर निकलने की युक्ति. ज्ञान है केवल बुद्धि की समझ और अनुभूति है उच्चतम. शब्द तो मायाजाल है. प्राकृति के सत्य को शब्दों से नहीं भेदा जा सकता. शब्दों के सौंदर्य से, वाक्यचात्रुता से उसे कुछ लेना देना नहीं. प्राकृति का वह महानतम सत्य केवल आत्मा (Self) की समझ में आता है. दो आत्मायें भी जुड़ें तो भीड़ बनती है. केवल एक आत्मा! केवल एक पारब्रह्म! केवल एक तार केवल एक रास्ता! संवाद से बनता है पहले वाद फिर विवाद. ज्ञानी का, भक्त का, संवाद सिर्फ उस से होता है जिसे वह जानना चाहता है-आत्मा, सैल्फ या पारब्रह्म. वह अपना माध्यम स्वयं, स्वयं का गुरु, खुद का पुजारी. किसी अन्य माध्यम, गुरु का पुजारी का इस ज्ञान से कोई रिश्ता नहीं.

गंगा कहती रहीं-ज्ञानि सुनता रहा

'तुम इतना ताम-झाम करते हो! इतनी यातायात, इतनी संचार व्यवस्था! इतनी मोटर गाड़ियां! मेरे पानियों पर, मेरे किनारों पर उन अनजान भक्तों को लाने के लिये! ज़रा सोचो एक दिन में कितने! एक साल में कितने! और कितनी सदियों तक! मेरे बच्चे! केवल मानव मल की बात नहीं कर रही, उसे मैं ढो लूंगी. वे तन का मैल फेकें या मन का, इसकी भी परवाह नहीं! पर इतना यातायात! इतना ताम-झाम! इतनी प्लास्टिक! इतने दिये! इतनी बातियां! इतने फ़ल-फूल पूजा समग्री! हस्तनिर्मित देवी देवों की प्रतिमायें! इन सब से मैं मानती हूं कि रूठती हूँ ! मैं रूठूं तो क्या बाढ़ लाउं? कोई पूछता है? फिर इतने लोगों की इतनी गाड़ियां! उन सब के कल-पुर्जा ग्ह, वे सारे कारख़ाने! सौंदर्य-प्रसाध्नों की, जूतों की चप्पलों की बड़ी बड़ी फैक्टरियां! उन से निकलता रासायणक ज़हर! जो जायेगा मेरे पानियों में तो क्या हाल होगा मुझ में बसे मेरे प्राणियों का? भारत भर में ही नहीं, विष्व भर में मैं मरते प्राणि की प्यास बुझाती हूं! पर मैं स्वयं प्राणि की मृत्यु का कारण बनूं! मुझ आभागिन को क्यों पापों की भागिन बनाते हो? गंगा की मूक वाणि ज्ञानी सुनता रहा. उस के कानों में रस नहीं पिघला सीसा डल रहा था शायद ! जो दे रहा था उसे असहनीय दर्द!

गंगा कहती रहीं-

‘और तुम्हारे ज्ञानी गण केवल पारब्रह्म का रास्ता ही नहीं बताते. जिस पारब्रह्म का मन्दिर सिर्फ आत्मा होती है धरती पर वे बताते हैं मन्दिर वहां नहीं यहां बनेगा! और यहां से उठ कर किस देशी विदेशी भगवान का घर तोड़ना है. कितने दिलों को तोड़ना है. सब का हिसाब बना रखा है सब व्यवस्था कर रखी है. मानव मल का बोझ मैं ढो लूंगी. पर मानवीय क्रूरता के इस अथाह मल को वे मेरे पानियों में फेंक आते है! वे सब ज्ञानी गण! इतना बड़ा अहम् संजोये रखते हैं. वाद का कम प्रचार करते हैं और विवादों का ज्यादा....! तुम परम आत्मा की खोज करते हो? परम आत्मा की खोज करने वालों की मदद करते हो? सुनो, सुन सकते हो अगर! परमात्मा तुम्हारे शब्दों के ढेर के नीचे दबा पड़ा है! आत्मा तुम्हारे ज्ञान के नीचे सिसक रही है! वह लाख़ों करोड़ों भक्तों की भगदड़! वे सहकते प्राणि! तुम लोग भूल जाते हो मैं नहीं भूलती. मानव इतना तुच्छ है तुम्हारे लिये! मानवता इतनी छोटी है क्या? तुम्हारे व्यक्तिगत अभियान की, और कभी तुम्हारे व्यक्तिगत अभिमान की साधन मात्र!

गंगा अस्फुट वाणि में कहती रहीं.

ज्ञानी भावुक हो गया.

कुछ बोलते न बना. वहां से उठ खड़ा हुआ.

उसे डर लगने लगा कि वहां बैठा रहा तो मानवीय मल का या शायद मानवीय मन का कोई हिस्सा छोड़ देगा गंगा जी में घुलने के लिये! अभी तक कुछ धारा तो बची है- साफ़! स्वच्छ! निर्मल!

अभी तक कुछ ज्ञान तो बचा है-

शुद्ध! शाश्वत! महान्तम सत्य!

मानवीय कुण्ठायों, मानवीय अहम्, और मानवीय मन से अप्रभावित! जो प्रकृिती के नियमों के अंत्रगत ही अंतस् में उतरा और जैसा आया वैसा बांट दिया गया.

तथ आगत! तथागत!!

पर कुछ कहते न बना. वहां से उठ खड़ा हुआ.पहला प्रवचन दिया-

चलिये शाश्वत गंगा की खोज करें...

चलिये शाश्वतगंगा की खोज करें, महानुभाव! शाश्वत गंगा केवल पानी की गंगा नहीं. शुद्ध शाश्वत सत्य की गंगा. अजी... आप हरिद्वार के पास, हरिद्वार इलाहाबाद संगम के पास से हो कर चल दिये वापिस अपने घर अपने कारोबार! आइये थोड़ा उत्तर दिशा में भटकें! आइये शाश्वत गंगा की खोज करें! कहां तक चलेंगे आप? देहरादून .... गंगोत्री या गौमुख तक! गंगा जी का उद्गम् स्थान! अजी रुकिये मत. थोड़ा और उपर चलें! गंगा जी यहां भी शाश्वत नहीं. यहां भी बरतन डुबाते हैं लोग, हाथ भी.

थोड़ा और उपर चलें! वहां यहां स्फेद बर्फ की चादर बिछी है! स्फेद रुई सी बर्फ! या बरखा की हलकी फुहार! ज़रा चेहरे पर लगने दें! चेहरे पर, देह पर, आत्मा पर! ज़रा उपर आसमान की ओर देखें! आसमान से उतरती बरखा को देखें! वहां से अविरल गंगा जी धारा बह रही है!

आसमान से उतरती गंगा! स्वर्ग से धरती पर आती गंगा! शुद्ध शाश्वत गंगा!

ऋग्-वैदिक गंगा! पौराणिक गंगा! सत्य युग की गंगा! कलियुग में बहती गंगा! वह मानव मल रहित गंगा! केवल अपना तेज लिये!

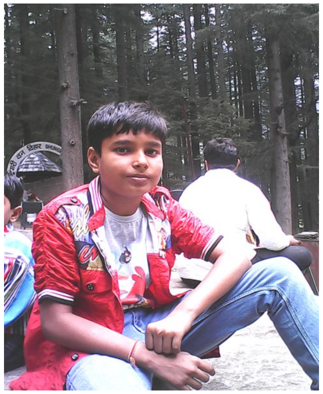
शायद कहेंगे आप- यह स्वर्ग से आती गंगा! अरे ...यह तो वही गंगा है जिस का दर्शन जिस का अहसास मैं अपने घर की मुण्डेर पर ...टैरेस पर, आषाढ़ में ...श्रावण ....भादों में, साल के बहुत सारे दिन, मैं करता हूं!

मेरे तो पास थी यह गंगा! यह शुद्ध शाश्वत गंगा! और मैं गंगा ....वह पवित्र नदी को मलिन करने पहुंच जाता था, हरिद्वार ... काशी.....संगम!!! (क्रमशः)

"तुम्ही से"

-स्वर्ण जे. ओमकार

गॉड इज़ वन



–रैक्व स्वर्ण

परमात्मा है एक कहते हैं सब

क्या मानूं मैं क्या समझूं

कि परमात्मा ऑड है ईवन नहीं

कि परमात्मा किसी से दोस्ती नहीं करता

कि वह किसी को पास नहीं फटकने देता

कि वह अकेला रहना पसंद करता है

कि उसका घर–बार बीवी बच्चे नहीं

बच्चे भी नहीं

उस ने हमीं लोगों को बच्चे बनाया हुआ है

पापा कहते हैं

कि परमात्मा को समझने का यह ढंग ठीक नहीं

परमात्मा 'एक' नहीं परमात्मा इक्काई है वन युनिट

होल ऑफ़ युनिवर्स संपूर्ण बृहृमण्ड

जिस में हम सब रह रहे हैं चांद तारों समेत

बात तो आई समझ में

पर मेरा प्रश्न एक और है

इस युनिवर्स इस बृहृमण्ड के बाहर क्या है

क्या परमात्मा उस के साथ नहीं

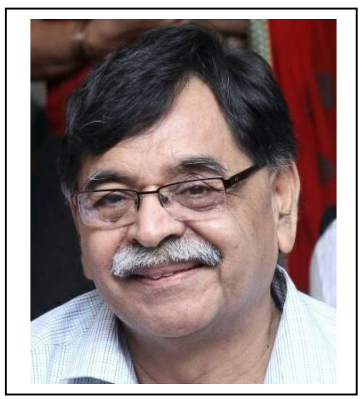
कानून के लम्बे हाथ

-- डॉ० विजय शंकर



कानून के हाथ बहुत लम्बे होते हैं
बचपन से सुनते आ रहे हैं ,
एक्ट पुलिस के हाथों होते हैं ,
फिल्मों में तो यही बताते हैं।
उसके पैरों की बात नहीं होती
शायद इसलिए कि कानून
कहीं चल के नहीं जाता।
अंग्रेज कानून की सीट बना गए
यहां बैठो , यहीं बैठे रहो।
आँखों पे पट्टी और बाँध लो देवी ,
मुकदमा जब आएगा सुन लेना
मुक़द्मा सुनों , आँखे मूँद कर।
कानून यूँ ही कुछ देखता नहीं ,
फैसला सुनवाई पे करता है.
सत्य रहे , सत्य की जय हो ,
इसलिये कानून हर भावना
संवेदना से दूर तक जुदा रहता है .
सिर्फ दलील से जुड़ा रहता है
जो पक्षकार दिखा दें , वही देखता है
क़ानून को संवेदनशील बनाओ,
जन जन के बीच चलायमान बनाओ,
खुद कानून की ताकत बढ़ाओ.
पट्टी खोलो , स्वद्दष्टा इंसान बनाओ।
चलती फिरती अदालतें बनाओ,
हर बात में क़ानून मत लगाओ,
क़ानून को थोड़ा मानवीय बनाओं।
न्याय नैसर्गिक और कुछ व्यवहारिक बनाओ।
फैसले जल्द कराओ, जल्द न्याय दिलाओ।
यश कमाओ ।नाम कमाओ।

दो ग़ज़लें डॉ श्याम सुन्दर दीप्ति



(1)

तुझ से हुई थी बात

दिन था नही थी रात

पेड़ सी ही कविता है

वोह डाली में पात

मिटटी में वोह पलता है

करता सोने सी बात

जो दुःख न जाने है

सुख न मिले सौगात

हाथों में दीप थामे

रोशन हुई है रात

(2)

क्यों बदलूँ मैं अपने ये ख्वाबों के मंजर,

तुम्हे परेशानी है तो बदल तू अपना खंजर

अपना दस्तूर तू तलब करके तो देख,

धरती की कोख भी कभी हुई है बंजर ?

तेरा मेरा खून बहेगा जब कोई हुआ फसाद,

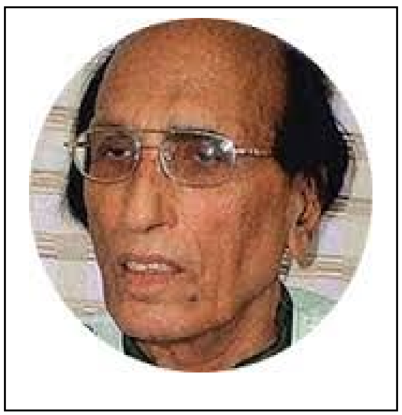
ज़रा खरोंच नहीं पाएंगे ये मस्जिद मंदिर

क्यों ताके क्यों झांके उसका चेहरा,

पंख पसार अपने पा अपना अम्बर

सिसकते आब में किस की सदा है / बशीर बद्र

"सिसकते आब में किस की सदा है कोई दरिया की तह में रो रहा है" जैसी पंक्तियां सनातन अध्यात्म को कम समझ आती हैं- 2010 के ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त माननीय बशीर बद्र की इस रचना में क्या हमारे तत्कालीन जल-स्रोतों और मानवीय बुद्धि दोनों का बेदर्दी से उपयोग से उठे दर्द का ब्यां है या इन में कोई अन्य अव्यक्त दर्द छुपा है **- संपादक**



सिसकते आब में किस की सदा है

कोई दरिया की तह में रो रहा है

सवेरे मेरी इन आँखों ने देखा

ख़ुदा चरो तरफ़ बिखरा हुआ है

समेटो और सीने में छुपा लो

ये सन्नाटा बहुत फैला हुआ है

पके गेंहू की ख़ुश्बू चीखती है

बदन अपना सुनेहरा हो चला है

हमारी शाख़ का नौ-ख़ेज़ पत्ता

हवा के होंठ अक्सर चूमता है

मुझे उन नीली आँखों ने बताया

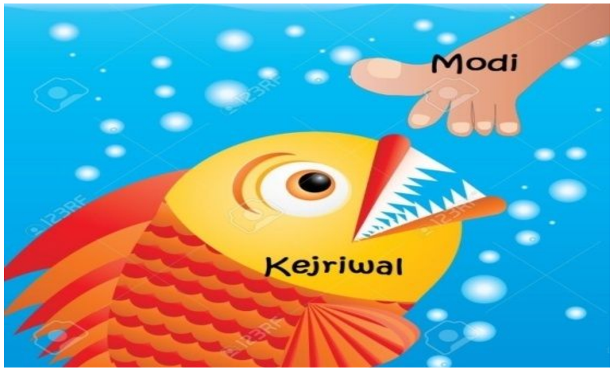
तुम्हारा नाम पानी पर लिखा है http://www.kavitakosh.org से साभार

हमें मालूम है जन्नत की हक़ीक़त...(सम-सामयक विष्यों पर चर्चा) (स्थाई स्तम्भ)

(इस स्थाई स्तम्भ में हम सम सम्यक विष्यों पर चर्चा करेंगे)

केजरीवाल की खिच खिच





बच्चा रो रहा है. माता पिता काम में बिजी हैं. बच्चे की मांग है -कुछ मीठा जैसे कोई टाफी या चॉकलेट या कोई कैंडी या ' चूपा ' ही. कुछ भी पर हो मीठा. अब मैडिकली भी यह सच है. बच्चा खेलता है, रोता है, हँसता है- उसे भूख तो लगेगी ही. और उसे तो ज्यादा भूख लगती है. उसे "हाइपो -ग्लायसेमिआ" हो जाता है. उस का शरीर व दिमाग मीठा मांगता है. मीठा एक क्विक एनर्जी सोर्स है.

अब माता पिता बिजी हैं. कई काम हैं उन्हें -जैसे टी.वी सीरियल देखना, बतिआना, लड़ना झगड़ना इत्यादि. वो बच्चे की इस कुसमय की गई अविवेकपूर्ण मांग का क्विक सलूशन खोजते हैं. वोह उस के हाथ में छुनछुना (पंजाबी में छणकणा) थमा देते हैं. डेमोंस्ट्रेशन के लिए वे उसे चला कर जानि "छन छना" कर भी दिखा देते हैं - “देखो बेटा रोओ नहीं. इसे बजाओ और आनंद लो”.

बच्चा बड़े अनमने ढंग से खिलोने को देखता है. ले लेता है. अब हाथ में कोई चीज़ थमा ही दी गई है तो लेनी तो पड़ेगी ही. थोड़ा बजा कर भी देखता है. अजीब सी आवाजें निकलती हैं. वह क्यूरियस हो जाता है. फिर और बजाता है. थोड़ी देर के लिए मीठा भूल जाता है. पर थोड़ी देर के लिए ही. तभी उसे फिर भूख

सताती है. वह फिर रोता है. "हमें मालूम है जन्नत की हक़ीक़त .." बच्चा कहता है. "लेकिन दिल बहलाने के लिए यह ख़याल अच्छा है..." माता पिता कहते हैं.

माता पिता कोई नया सलूशन खोजने लगते हैं. मीठा उन की अक़ल व पहुँच के बाहर है.

कुछ ऐसी ही स्थिति है दिल्ली राज्य की. अगर राज्य कहा जाये तो. केजरीवाल सरकार छुन-छूने खोजने में माहिर है. दिल्ली की जनता मीठा चाहती है. अब मीठा केजरीवाल के बस में नहीं. मीठे के कमरे के बाहर लेफ्टिनेंट गवर्नर का ताला है. उस ताले की चाबी मोदी के पास है. केजरीवाल परेशान जनता को छुन-छूने पर छुन-छुना थमाए जाते है. जनता थोड़ी देर के लिए बजाती है. फिर रोती है. उन्हें मीठा चाहिए. "हमें मालूम है जन्नत की हक़ीक़त .." जनता कहती है. "लेकिन दिल बहलाने के लिए यह ख़याल अच्छा है..." केजरीवाल कहते हैं.

अब केजरीवाल अलग से परेशान है. जब से दिल्ली में आये हैं. उन्हें खांसी हो गई है. हर वक़्त खांसते रहते है. बड़े इलाज करवाये पर खांसी है कि जाने का नाम नहीं ले रही. ऐम्स में भी हो आये हैं. वहां के डॉक्टरों से अजीब वार्तालाप हुई. डॉकटरों ने बताया "केजरीवाल जी आप कि गले में "मोदी" नाम का कीटाणु है. वोह तंग करता है आपको." अपने फेवरेट स्टाइल में केजरीवाल कहते हैं- "अब डायग्नोसिस किया है तो इलाज भी बता दो भाई जान."

डॉक्टर कहते है. "केजरीवाल जी यह मोदी नाम का कीटाणु बड़ा चंचल है जी. वह तो आप को देखने क़े लिए आप के गले में रहता है."

केजरीवाल: "अब गले में रह कर वोह क्या देखना चाहता है."

"यही कि आप क्या क्या खाते हो. अभी तक क्या खाया है और क्या क्या खाने का इरादा है. बड़ा जासूस है जी वोह."

"लो मैं क्या खाऊंगा. किचेन में तो लेफ्टिनेंट गवर्नर का ताला है."

"बस जी यही इलाज है. आप खाओ भी और कीटाणु को भी खिलाओ लेफ्टिनेंट गवर्नर को भी खिलाओ. आखिर कीटाणु का भी तो गला होता है. कुछ उस के अंदर गया तो साइड में लगा बैठा रहेगा. आप (AAP) को परेशान नहीं करेगा."

घड़े की मछलियां

मोदी घड़े में मछलियां पालने में माहिर हैं. वे गुजरात के तटीय इलाक़े से आते हैं. समुदर में मछिआरों से नाता रहा हो ऐसा उन की बायोग्राफी में नहीं मिलता. वहां चाय का ज़िकर है. शायद मछिआरों के साथ

चाय पीते पिलाते समय बतियाते रहे हों. लेकिन उन का मछलियां पालने का तजुर्बा कमाल का है.

उन के घड़े (जल कुम्भ) में बड़ी मछलियां है. बस यदा कदा उन्हें घड़े से निकाल कर बतिया लेते हैं. जिस दिन जिस मछली को निकलना है घड़े में झाँक कर देखते हैं और फट से बाहर निकाल लेते है. अब 'बादल' नाम की मछली को निकला तो वोह रोने लगी.

"भुख्खे मर गए तेरे राज 'च ओ मोदी. कोई साडे वल वी तक्क लिया कर."

मोदी कुछ कहना चाहते हैं पर मछली चुप्प नहीं कर रही. बस रोये जा रही है.

"अब दो दो काकिआं नूं लै के किथे जावां मैं."

"पर बादल जी यहाँ तक मेरा ज्ञान है आप का इक ही काका है जी."

"ओ जी अब नूहं दा भरा वी तां अपणा काका है जी."

मोदी चुप कर जाते हैं. सोचते हैं अब इन की गरीबी कहाँ तक ठीक करूँ मैं. फिर किसी दिन वो अखिलेश नाम की मछली को निकलते है. वो झेम्प जाती है. बतियाती नहीं. मोदी पूछते हैं- "कविता याद है? चलो दोहराओ."

"अक्की अक्की ?"

"यस पापा!"

"एवरीथिंग राइट"

"यस पापा."

"एनी रायट"

"नो पापा."

"मुज़फ्फर नगर ... दादरी"

"हा हा हा..." अक्की को दुबारा घड़े में छोड़ देते हैं.

लालू और नितीश नाम की मछलियां तो पूरी फिसलन से भरी हैं. घड़े में होते हुए भी वोह पकड़ में नहीं आती. बार बार हाथ से फिसल जाती हैं. दूर से चिड़ाते हुए चारा खाती रहती हैं. और मनोहर लाल खट्टर, शिवराज सिंह चौहान, देवेन्द्र फडणवीस, वसुन्धरा राजे सिंधिया जैसी मछलियां की मजाल क्या कि उनसे आंख मिला कर बात कर सकें. वोह तो दिशा निर्देश मांगती हैं. मजे से चारा दाना खाती रहती हैं.

केजरीवाल नाम की मछली तो पिरान्हा (Piranha) है. मुहं में बड़े बड़े दाँतो वाली मछली. मोदी जब भी उसे पकड़ने को हाथ बढ़ाते हैं. वोह काट खाती है.

जब भी मोदी का उस से सामना हुआ अगले दिन उन के हाथ में पट्टी बंधी नज़र आती है.

अब ये कुछ मछलियां हैं मोदी उन्हें घड़े में नहीं रखते. पर वोह घड़े में आने के लिए लालायत हैं. घड़े में चारा ज्यादा है और मोदी उन मछलियां की देख भाल भी खुद करते हैं.

यशवंत सिन्हा, आडवाणी, अरुण शोरी, मुरली मनोहर जोशी जैसी मछलियां तो अब बूढ़ी हो चुकी हैं. पर वोह हैं कि मानती नहीं. मोदी उन्हें "फिश एक्वेरियम" में रखते हैं. लोग बाग़ उन्हें दूर से देख कर प्रसन्न होते हैं. यदा कदा वोह एक्वेरियम मैं उछाल कूद मचाती हैं. उन की उछाल कूद देख कर लोग और प्रसन्न होते हैं. पर मोदी परवाह नहीं करते.

एक दिन 'अडवाणी मछली' ने कुछ ज्यादा ही उछाल कूद मचाई. मोदी झगड़ पड़ते हैं.

"अब अडवाणी जी आप रिटायर हो जाइए क्यों मेरे यानि देश के पीछे पड़े हो?"

"अभी कहाँ. अभी भी मुझ में रथ चलाने की हिम्मत है."

"बड़ा रथ चला लिया. अब तो घोड़े भी भाग गए. अब यंग लोगों का ज़माना है. जो मीडिया ट्विटर फेस बुक मैनेज कर सकें.

“मेरा चेला है एक वोह "बी. जे. पी. के उत्थान में रथ का योगदान " के विषय पर पी. एच. डी. कर रहा है. उस से बतिया लेना और दिल हल्का कर लेना."

“अब पुरानी चीज़ों में पुरातत्त्व खोजी ही इंटरेस्ट लेंगे. और क्या आचार डालूँगा मैं आपका" मोदी बुदबुदाते हुए आगे बढ़ जाते हैं.

अब नए वर्ष में देखना है कि मोदी नवाज़ शरीफ व हाफिज सईद को घड़े में डाल पाते हैं कि नहीं.

("तुम्ही से" पोलिटिकल एनालिस्ट)

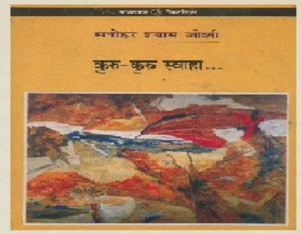
उत्तर आधुनिकवादी थे मनोहर शयाम जोशी

- कृष्ण कुमार यादव



बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी मनोहर श्याम जोशी के नाम से भला कौन अपरिचित होगा। वह आजीवन लिखते रहे, रचते रहे और जीवन को भिन्न-भिन्न आयामों से महसूस करते रहे। किस्सागोई तो उनके स्वाभाव में ही बसी था। मृत्यु से दिनों पहले ही एक साक्षात्कार के दौरान उन्होंने कहा था-"**इस समय हमने जो कुछ भी लिखा है, उसमें सन्तोष नहीं है। मरने के पहले सन्तोष वाला कुछ लिखना चाहता हूँ।**"उस दौरान वे 'कपीश जी' लिखने में व्यस्त थे। इस रचना में पूर्व बनाम पश्चिम की भिड़ंत को उन्होंने पवनपुत्र हनुमान के माध्यम से उकेरा है। हनुमान जी स्वप्न में अब्राहम लिंकन जैसी दाढ़ी वाले एक व्यक्ति से उनकी मुलाकात करवाते हैं. वस्तुतः इस रचना के माध्यम से जोशी जी ने अमेरिका एवं भारत की सात पीढ़ियों का किस्सा व्यक्त किया है। यही कारण है कि लोग उन्हें किस्सागोई का बादशाह कहते थे। पर स्वयं जोशी जी इसे कुमायूँनी परम्परा की प्रतिध्वनि मानते थे। जोशी जी ताउम्र हिन्दी की साहित्यिक परम्परा के विपरीत साहित्यवाद से बचते रहे। उन्होंने साहित्यवाद के स्थापित तरीकों को तोड़ा और अपने हिसाब से नए प्रतिमानों की रचना की। वे स्वयं कहते थे-"**मैं विद्वान नहीं हूँ। मेरी विद्वता मात्र पत्रकारिता के स्तर की है। थोड़ा यह भी सूँघ लिया, थोड़ा वह भी सूँघ लिया। मैं तो प्रिन्ट मीडिया का आदमी हूँ।**" यही कारण था कि जोशी जी का लेखन परम्पराओं, विमर्शों, विविध रूचियों एवं विशद अध्ययन को लेकर अंततः संवेदनशील लेखन में बदल जाता है। भव्य और आकर्षक व्यक्तित्व वाले बहुमुखी प्रतिभा के धनी मनोहर श्याम जोशी का जन्म 9 अगस्त 1933 को अजमेर में हुआ था। उनके पिता श्री प्रेमवल्लभ जोशी वहाँ राजकीय शिक्षा सेवा में अधिकारी थे। बचपन से ही वैज्ञानिक बनने की तमन्ना रखने वाले जोशी ने लखनऊ विश्वविद्यालय से बी.एस.सी. की डिग्री प्राप्त

की एवं 'कल के वैज्ञानिक' उपाधि से नवाजे गए। विज्ञान के विद्यार्थी होने के कारण वे चीजों को गहराई में उतरकर देखने के कायल थे। लखनऊ की जमीन तो वैसे भी साहित्य के लिए रसायन का काम करती है, सो, लखनऊ लेखक संघ की एक बैठक के दौरान



मनोहर शयाम जोशी के नॉवेल "कुरु कुरु स्वाहा" का एक अंश

चलती का नाम चालू

सबसे पहले एक नाचीज-से दलाल का जिक्र करना जरूरी होगा क्योंकि उस बहुत-ही पहुँची हुई चीज की ओर सबसे पहले मेरा ध्यान उसी ने खींचा था।

दलाल का नाम था बाबू। उसका अब न कोई अपना हल्का था, न कोई खास माल। आदत से मजबूर वह साँझ-ढले चौपाटी आ जाया करता ताकि कहीं रौनक-तलाशती आँखें दीखें तो वह 'मदत पाहिजे ?' वाली मुद्रा में प्रस्तुत हो जाए।

तो इस बाबू ने एक दिन मैरीन ड्राइव में मेरी जिज्ञासु दृष्टि की अपने ही ढंग से व्याख्या करने के बाद पहले मुझसे माचिस माँगी और फिर सिगरेट का धुआँ छोड़ते हुए सेवा-भाव से पूछा, "तफरी होने का ?"

मेरा अकेलापन उन दिनों बहैसियत पत्रकार वेश्यावृत्ति पर अनौपचारिक अनुसन्धान कर रहा था। लिहाजा प्रस्ताव मैंने सुना। फिर अनुभवी होने का नाटक करते हुए कहा, "इदर तो सब बंडल तफरी। उदर वर्ली में कहीं कोई एंग्लो-इंडियन बाई चलाई है नवाँ फिलाट, उसका पता तुम कूँ ?"

बाबू ने सिर खुजलाया, "कौन बाई, नाव काय उसका ?"

बाबू को कुछ और ध्वस्त करने के लिए मैंने इस दलाल से सुनी हुई बात, उस दलाल पर दे मारने का अपना नुस्खा फिर आजमाया, "ए जो फिल्मों में काम कर चुका मरैठी छोकरी; करमाइकल रोड में धन्धा सरू किया, उसकू जानता तुम ? जिसका दलाल पवनपुलवाला बंगाली का दोस्त डिसिल्वा ?"

"नेंई, इन दोन अब्बी मेरा ध्यान में नहीं। लेकिन पत्ता कर देंगा। अक्खा दलाल लोक बाबू का सागिर्द।"

'दलालों के दलाल' बाबू के अहम् को चढ़ाने-गिराने के खेल में मुझे लुत्फ आने लगा। अनुसन्धान की कोई-कोई शाम मैं चौपाटी के नाम कर देता, 'पान-सिगरेट-नाश्ता-पानी' बाबू को करवाता, और धन्धे के विभिन्न पहलुओं का उसके साथ फोकट में नजारा करता। मैं बराबर उससे कहता रहता कि जिस तरह का माल अपन को दरकार ओ बाबूइच दिलवा सकता। लेकिन बाबू जिस भी माल से परिचय करता या जिसका भी पता देता, मैं उसे पूर्व-परिचित बता देता अथवा घटिया।

बाबू दुःखी रहने लगा कि वह 'दलालों का दलाल' इस दोस्त-ग्राहक के लिए कोई माल-सा-माल तजवीज कर नहीं पा रहा है। जब भी मैं उससे मिलता वह नए अनुसन्धान के आधार पर कोई प्रस्ताव पेश करता। मिसाल के लिए बाबू कहता, "प्रार्थना समाज

कुरु-कुरु स्वाहा... / 5

वे अपने प्रथम साहित्यिक गुरू अमृत लाल नागर से टकरा गए और फिर यहीं से महज 21 वर्ष की उम्र में ही मास्टरी, क्लर्की और बेरोजगारी का अनुभव बटोरते हुए लेखन को पूरी तरह से जीविका का आधार बना लिया। लखनऊ लेखक संघ की बैठकों में अमृत लाल नागर, भगवती चरण वर्मा और यशपाल ये तीनों साहित्यिक दिग्गज नियमित रूप से आते थे। जोशी जी ने इन तीनों ही विद्वानों से कुछ न कुछ सीखा- नागर से भाषा और किस्सागोई, भगवती बाबू से तुर्शी तो यशपाल जी से नजरिया। जोशी जी लेखक संघ की जिस बैठक में पहली बार गए उसमें उनके द्वारा कहानी पाठ प्रस्तावित था। फिलहाल जब जोशी जी ने 'मैडिरा मैरून' नामक अपनी कहानी का पाठ किया, जिसमें उन्होंने भावुकता-व्यंग्यात्मक तेवर आजमाए थे, तो उनकी सबसे ज्यादा तारीफ अमृत लाल नागर ने की। नागर जी ने उस कहानी पाठ के बाद जोशी को गले लगाकर कहा- "इस नए लेखक की खोज से मुझे इतनी खुशी हुई है, जितनी कि फैजाबाद में पुरानी अयोध्या के अवशेष मिलने से।" उन्होंने आरम्भ में कविताएँ लिखीं एवं उसके बाद कहानी व उपन्यास लेखन में प्रवृत्त हुए। पढ़ाई पूरी होने के पश्चात एक स्कूल में मास्टरी और तत्पश्चात आकाशवाणी में नौकरी की। उसके बाद जोशी जी उस समय की प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिका 'दिनमान' में सहायक सम्पादक और फिर 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' के सम्पादक बने। उस समय 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' और 'धर्मयुग' दो ऐसी पत्रिकाएं थीं जो सम्पूर्ण देश की सांस्कृतिक-सामाजिक चेतना की संवाहक थीं।

एक सम्पादक के रूप में जोशी जी ने साहित्य की हर विधा में रचनात्मक हस्तक्षेप किया और युवाओं को आधुनिक बोध से जोड़ते हुए कहानी व कविता के दायरे से परे व्यंग्य, यात्रा-वृतांत, रिपोतार्ज, कवर स्टोरी, संस्मरण इत्यादि की तरफ भी प्रवृत्त किया।

जोशी जी समय की नब्ज को पहचानने में माहिर थे। उन्होंने अपने को एक ही क्षेत्र तक सीमित नहीं रखा बल्कि साहित्य के अलावा, पत्रकारिता, टी.वी. धारावाहिक और सिनेमा

माध्यमों से भी वे गहरे व जीवंत रूप से जुड़े रहे। उनका कहना था कि- "जो विधा मुझे अपने पास बुलायेगी, उसके पास जाना चाहूँगा। अनामंत्रित ढंग से विधाओं से मेल-मिलाप नहीं करूँगा।" इसके चलते जहाँ उनके लेखन में सहज संप्रेषणीयता आई वहीं वे प्रयोगधर्मी भी बने रहे। वे एक ऐसे लेखक थे जो अपनी तरह से सोचता और लिखता था। उनकी स्मृति भी बहुत अच्छी थी। उनके द्वारा लिखित सोप ओपेरा 'हम लोग' हिन्दी का और भारत का ऐसा धारावाहिक बना जो अपने समय में दुनिया के सबसे ज्यादा देखे जाने वाले धारावाहिकों में शामिल था। 'हम लोग' की विशेषता भारतीय शहरी मध्य और निम्न मध्य वर्ग की आकांक्षाओं-संघर्षों की ऐसी कहानी है, जो बेहद सहजता, शालीनता व संवेदनशीलता के साथ कही गई है।

जब 'हम लोग' धारावाहिक शुरू होता था तो बाहर सड़कों और गलियों में कोई नजर नहीं आता था। उन्हीं दिनों एक अखबार में

'हम लोग टाइम' नाम से एक कार्टून प्रकाशित हुआ था, जिसमें मंत्री जी की सभा में किसी के भी न आने पर वे अपने सेक्रेटरी को डाँट पिलाते हैं- ''किस मूर्ख ने तुम्हें सभा का यह वक्त रखने के लिए कहा था? जानते नहीं कि यह हम लोग टाइम है।'' हिन्दी साहित्य के उत्तर आधुनिक काल में लिखे उनके धारावाहिकों- बुनियाद, कक्का जी कहिन, मुंगेरी लाल के हसीन सपने, जमीन आसमान, गाथा हमराही इत्यादि ने भारतीय मनोरंजन को एक नई दिशा दी एवं दूरदर्शन के क्षेत्र में भी क्रान्ति लाई। टी.वी. धारावाहिकों के साथ-साथ जोशी जी ने कई फिल्मों की पटकथा भी लिखी। इनमें हे राम, अप्पू राजा, भ्रष्टाचार और पापा कहते हैं इत्यादि प्रमुख हैं।

जोशी जी खास किस्म के गम्भीर और कॉमिक लेखक थे। कॉमिक का मतलब गम्भीर अर्थों में कॉमिक, जो हमारे यहाँ अक्सर लक्ष्य नहीं किया जाता है। वे सामाजिक और पारिवारिक संस्थाओं का मजाक उड़ाते हैं और परिस्थितियों की कारूणिकता को हास्य-व्यंग्य के जरिए हल्का करना चाहते हैं। यही नहीं, उनकी नितांत अपनी विशेषता थी- अपने पांडित्य पर ही नहीं अपने समूचे आप पर हँस सकने की सामर्थ्य। इसी अद्भुत क्षमता के चलते उनकी 'लखनऊ मेरा लखनऊ' जैसी श्रेष्ठ आत्मकथात्मक कृति सामने आयी। वस्तुतः जोशी जी ने जिस दौर में लिखना आरम्भ किया वह विसंगति-विडंबना का जमाना था। विरूपतायें समाज के हर क्षेत्र में कुकुरमुत्ते की तरह जमीन से फूट रही थीं। ऐसे समय में उन्होंने अपना पहला उपन्यास 'कुरू-कुरू स्वाहा' लिखा। 'कुरू-कुरू स्वाहा' ने हिन्दी उपन्यास को रूमानियत से मुक्त किया और उसके जड़ हो चुके फॉर्म को तोड़कर भाषा को एक नया आयाम दिया, जो निहायत सामयिक और आधुनिक था। इस उपन्यास ने साबित किया कि कोई श्रेष्ठ रचना एक नहीं, दो नहीं वरन् कई स्तरों पर चलती है। स्वयं जोशी जी का मानना था कि उन्होंने यह उपन्यास अर्जेंटीना के लेखक गोरखेज से प्रेरणा लेकर लिखा जो सारे साहित्यिक आन्दोलनों में हिस्सा लेने के बाद लेखन के क्षेत्र में लौटे थे। **पूरा नॉवेल पढ़ें :**

https://www.scribd.com/doc/183213636/Kuru-Kuru-Svaha-Manoshar-Shyam-Joshi

जोशी जी की यह एक अनूठी विशेषता थी कि वे अपना उपन्यास डिक्टेट कराके लिखवाते थे, यानी चलते-फिरते हुए भी वे उपन्यास लिख सकते थे। उनके उपन्यासों में अनुप्रास का प्रयोग है और उनके शीर्षक उनकी शैली का संकेत देते है। शैली में संश्लिष्टता उनकी खूबी है और शीर्षकों में खिलंदड़ापना है। जोशी जी की यही प्रवृत्तियाँ उन्हें अपने समकालीनों निर्मल वर्मा और श्रीलाल शुक्ला से अलग करती हैं। निर्मल जहाँ एकांत के अँधियारे में चले गए वहीं श्रीलाल की रचनाओं में व्यंग्य और भी वाचाल व तीखा होता गया।

मनोहर श्याम जोशी आधुनिकतावादी एवं उससे भी आगे बढ़कर उत्तर-आधुनिकतावादी थे। उनकी समग्र रचनाशीलता में

क्रांतिधर्मिता है। प्रेस, रेडियो, टी.वी., वृत्तचित्र, फिल्म, विज्ञापन, व्यंग्य, संप्रेषण इत्यादि क्षेत्रों में समान रूप से सर्वश्रेष्ठ लेखन करने वाले जोशी ने आजाद भारत के राजनैतिक समाज के भूलभुलैया भरे रास्तों में निरंतर परिवर्तन होते देखे तो भूमण्डलीकरण एवं सूचना-क्रांति के कारण सिमटती दुनिया के आंतरिक विघटन व ग्लानि को भी देखा। यहाँ तक कि पश्चिम की प्ले ब्वॉय जैसी पत्रिकाओं में उपलब्ध हाने वाले सेक्स सम्बन्धी दिलचस्प विषयों को भी जोशी जी ने सत्तर-अस्सी के दशक में जोरदार ढंग से छापा। कोई भी ऐसा प्रसंग नहीं रहा जिस पर उनकी कलम न चली हो- चाहे वह अमेरिका द्वारा विश्व-पुलिस के रूप में भूमिका निभाना हो अथवा प्रवासी भारतीयों के अधकचरे भारत प्रेम से लेकर सिलिकॉन वैली का वर्णन हो। कभी-कभी उनकी साफगोई एवं यथार्थ को उसी कटु रूप में परोसने के चलते कई आलोचकों ने 'सिनिसिज्म' (मूल्यहीनता) जैसे आरोपों से भी उन्हें नवाजा पर 'कसप' जैसे संवेदनशील प्रेम-आख्यान, जिसका शुमार हिन्दी के दो-तीन श्रेष्ठ उपन्यासों में होता है, के लेखक पर यह आरोप लगाना स्वयं में विराधाभास लगता है।

मनोहर श्याम जोशी (9 अगस्त 1933-30मार्च 2006) का रचना संसार इतना व्यापक एवं जटिल था कि उस पर कोई एक लेबल लगाना सम्भव नहीं। वक्त के साथ उन्होंने टी.वी. और सिनेमा के बढ़ते प्रभाव को समझा और लोगों तक अपना संदेश देने हेतु उनका भी प्रयोग किया। वे एक प्रोफेशनल लेखक थे और इस रूप में उन्होंने मीडिया, साहित्य और तकनीक के बीच एक अनूठा अन्तर्संबंध कायम किया। बेबाकी अन्त तक उनके स्वभाव में छायी रही पर अफसोस व तड़प भी। एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा था-"वस्तुतः जिन चीजों को लेकर हम निकले थे वह तो इस सदी में हुई नहीं। अगली सदी में क्या होगा हमें समझ में नहीं आता?"

कृष्ण कुमार यादव निदेशक डाक सेवाएं

अंडमान व निकोबार द्वीप समूह -पोर्टब्लेयर-744101

बिना अनुभव कोरा शाब्दिक ज्ञान अंधा है.

करत करत अभ्यास के जड़ मति होंहिं सुजान।
रसरी आवत जात ते सिल पर परहिं निशान।।
— रहीम

पंजाब का छठा दरिया **-सुप्रिया स्वर्ण**



यद्यपि पंजाब में अब तीन दरिया - सतलुज, ब्यास व रावी ही शेष बचे हैं तथापि पंजाब पांच दरियायों का प्रदेश ही कहलाता है. शेष दो दरिया - चनाब तथा जेहलम काषमीर से हो कर पाकिस्तानी पंजाब में बहते हैं. बीच की सरहद न हो तो हिन्दोस्तानी व पाकिस्तानी पंजाब में बहुत कुछ साझा है. ऐसे में प्रष्न उठता है कि पंजाब का छठा दरिया कौन सा है. कभी पंजाब के खुशहाल व हरे-भरे खेत देख कर कहा जाता था कि पंजाब में 'दूध व घी का दरिया' बहता है. पर मिलावट के इस दौर में इस दरिया में भी प्रदुषण जोरों पर है.

धर्म व राजनीति' का दरिया तो पंजाब में क्या पूरे देश में पूरे उफ़ान पर बह रहा है. अन्य दरियायों की तरह इस दरिया में भी यदा-कदा बाढ़ आती रहती है.
हां पंजाब में एक और दरिया जोरों से बह रहा है वह है 'शराब व् नशे का दरिया'.

पंजाब में इस समय शराब का सेवन अपनी चर्म सीमा पर है. 'टाइम्ज आव इंडिया' की एक रिपोर्ट के अनुसार पंजाब में PML यानि पंजाब मेड लिक्कर- देशी शराब व IMFL (इंडियन मेड फारेन लिक्कर) व Beer की 29 करोड़ बोतलें सेवन हुई हैं जबकि पंजाब की आबादी 2.75 करोड़ है. पंजाब के एक्साइज विभाग की मानें तो चालू वर्ष में टीचा 30.70 करोड़ बोतलें बेचने का है. हां, इस के इलावा लोगों द्वारा स्व-निर्मित देशी दारू यानि ठर्रा भी है जिसका कोई हिसाब नहीं. ष्राब के इलावा दूसरे नषे व ड्रग्स का भी कोई हिसाब नहीं है.

गुरू नानक देव यूनिवर्सिटि के सोषियालोजि विभाग द्वारा किये गये एक अध्ययन के अनुसार 13 वर्ष तक की आयु के बच्चे इस व्यसन में संलिप्त हैं. अध्ययन-कर्ता श्री रणविन्द्र सिंह संधु के अनुसार 40% सेवन कर्ता 50 वर्ष से कम हैं और 15% 50 से उपर की आयु के हैं. इस में एक बड़ा हिस्सा महलायों का है. श्री रणविन्द्र सिंह संधु आगे कहते हैं 'मुझे यह कहने में झिजक नहीं कि पंजाब में 75% से ज्यादा युवक न शे की एक या दूसरी लत के शिकार हैं. और यह लत बढ़ रही है.इतनी अधिक मात्रा में शराब का सेवन लोगों की प्रजनन क्षमता पर भी प्रभाव डाल रहा है. श्री बी.एस शाह जो दयानंद मैडिकल कालेज लुध्याना के मैडिकल सुप्रिन्टैंडेंट हैं और WHO की सीमन अनैलिस्स कमेटि के मैंबर हैं कहते हैं कि पंजाबी पुरुषों में स्पर्म काउंट (Sperm count) कम हो रहा है और इस का एक प्रमुख कारण ज़रूरत से ज्यादा शराब का सेवन है.

'तुम्ही से ' रिपो्र्रताज

पर्यावरण संकट के हल के लिए बने वैश्विक नीति -सुनीता नारायण



आज जलवायु जैसे संवेदनशील मुद्दे पर कोई भी गंभीरता से नहीं सोच रहा है जबकि तमाम

मुद्दों से कहीं ज्यादा जरूरी हमारे लिए जलवायु परिवर्तन का विषय है.

पर्यावरण के संबंध में क्या महज यह कह देने भर से हमारे कर्त्तव्यों की इतिश्री हो जाएगी कि यह ग्लोबल वार्मिंग या जलवायु परिवर्तन का असर है भारत एक विशाल क्षेत्रफल वाला देश हैए जहां पैदावार अच्छी होगी अथवा सूखा पड़ेगाए इसका पूरा दारोमदार गैर भरोसेमंद वर्षा जल पर निर्भर करता है। देश की कृषि योग्य जमीन का 85 प्रतिशत हिस्सा सिंचाई के लिए या तो प्रत्यक्ष रूप से वर्षा जल पर निर्भर होता है या भूजल पर। भूजल का स्तर प्रतिवर्ष होने वाली बारिश से ही तय होता है.

बिगड़ते पर्यावरण के कारण बरसात की स्थिति हर साल अनियमित होती जा रही है जबकि घरेलू जरूरतों के साथ ही सिंचाई का पानी हमें बेहतर मौसमी बारिश से ही मिलता है. पशुओं की परवरिश का भी यह सबसे महत्वपूर्ण जरिया है। लेकिन लंबे समय से भूजल के दोहन से स्थितियां बेकाबू हुई हैं. ऐसे में सवाल उठना लाजमी है कि जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा में उत्पन्न अनिश्चितता से लोग कैसे जूझ पाएंगेः फिर जिस तरह किसानों द्वारा गन्ना गेहूं तथा चावल की फसलों की सिंचाई के लिए ट्यूबवैल के रूप में भूजल का दोहन किया जा रहा है तो इस बात की क्या गारंटी है कि जलस्तर भयावह स्थिति तक नहीं पहुंच जाएगाः

पर्यावरण संरक्षण एवं इसकी जागरूकता के लिए सरकार द्वारा काफी योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाता है लेकिन इसके अपेक्षाकृत परिणाम नहीं निकलते. पर्यावरण संरक्षण के प्रति जब तक लोग व्यक्तिगत तौर पर जिम्मेदारी नहीं लेंगे. तब हालात नहीं सुधरेंगे। उदाहरण के तौर पर महाराष्ट्र के अहमदनगर जिले के हिवारे बाजार गांव का जिक्र करना बेहतर होगा। यहां 'चोर के हाथ में चाबी देने" वाली कहावत चरितार्थ होती प्रतीत होती है. 15 साल पहले तक सूखाग्रस्त इस गांव में सिवाए पलायन के लोगों के पास कोई दूसरा चारा नहीं था लेकिन 90 के दशक में वैज्ञानिक सोच और सरकारी योजनाओं के सही कार्यान्वयन के बाद बदलाव की बयार आई तो यह गांव आज समृद्ध दिखने लगा है.

सिंचाई के मामले में कहीं न कहीं सरकार की गलत नीतियां जिम्मेदार हैं और राज्य सरकारों ने नदियों पर बांधए नहरें वगैरह बनाकर सतह के पानी का प्रबंधन अपने पास रखा है और आज भी लोग सिंचाई के लिए सबसे ज्यादा भूजल का ही दोहन करते हैं. किसी की व्यक्तिगत जमीन का भूजल उसी की मिल्कियत माना जाता है. आज भी लगभग तीन चौथाइ हिस्से की सिंचाई भूजल से की जाती है। एक सर्वेक्षण के अनुसार देश में लगभग 1.9 करोड़ ट्यूबवेल कुएं जैसे भूजल के स्रोत हैं. सरकार को अपनी इस नीति पर पुनर्विचार करके सोचना चाहिए कि क्यों उसके प्रबंधन से केवल 35-40 प्रतिशत भूभाग की सिंचाई हो पाती है जबकि ग्राउंड वाटर से 65-70 प्रतिशत भूभाग की. जब हमने वर्षा जल संचयन के पारंपरिक तरीकों को छोड़कर नई तकनीकें अपना लीं तो उनकी कोई वैकल्पिक व्यवस्था क्यों नहीं की गईः

जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के खतरों से निपटने के लिए जब तक कोई वैश्विक नीति नहीं तैयार की जाती तब तक इस समस्या से निपटना नामुमकिन होगा. कहने को तो पिछले 17 सालों से बड़ी-बड़ी संधियां होती हैं और वादे किए जाते हैं लेकिन रहती सब बेनतीजा ही हैं। अमेरिका, जापान, कनाडा तथा न्यूजीलैंड जैसे कई विकसित देश यह कहकर पल्ला झाड़ लेते हैं कि वे तब तक कुछ नहीं करेंगे जब तक चीनए भारतए ब्राजील तथा दक्षिण अफ्रीका जैसे विकासशील देश प्रदूषण नियंत्रण के उपाय नहीं करते. **(सुश्री नारायण सेंटर फॉर साइंस एंड इन्वायरन्मेंट की निदेशक हैं - संपादक)**

सच कह दूँ ऐ ब्रहमन गर तू बुरा न माने / -इक़बाल

सच कह दूँ ऐ ब्रहमन गर तू बुरा न माने
तेरे सनम कदों के बुत हो गये पुराने

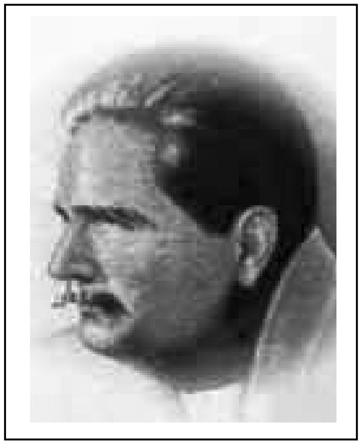
अपनों से बैर रखना तू ने बुतों से सीखा
जन्ग-ओ-जदल सिखाया वाइज़ को भी ख़ुदा ने

तन्ग आके आख़िर मैं ने दैर-ओ-हरम को छोड़ा
वाइज़ का वाज़ छोड़ा, छोड़े तेरे फ़साने

पत्थर की मूरतों में समझा है तू ख़ुदा है
ख़ाक-ए-वतन का मुझ को हर ज़र्रा देवता है

आ ग़ैरत के पर्दे इक बार फिर उठा दें
बिछड़ों को फिर मिला दें नक़्श-ए-दुई मिटा दें

सूनी पड़ी हुई है मुद्दत से दिल की बस्ती
आ इक नया शिवाला इस देस में बना दें



दुनिया के तीरथों से ऊँचा हो अपना तीरथ
दामान-ए-आस्माँ से इस का कलस मिला दें

हर सुबह मिल के गायें मन्तर वो मीठे मीठे
सारे पुजारियों को मै पीत की पिला दें

शक्ती भी शान्ती भी भक्तों के गीत में है
धरती के बासियों की मुक्ती प्रीत में है

-इक़बाल

http://www.kavitakosh.org/ **से साभार**

तेजी व रुस्तम की कवितायेँ

(1) बच्ची

एक दिन

उस के हिस्से का लावण्य मैंने उसे दिया

बहुत धुआंसी थी धुप उस दिन की

और मुझ पर एक मोर पंखी ओढ़नी

उसे लेने की जगह वह नहीं खड़ी थी.

डिठौना लगाये वह संतरे के छिलकों को देख रही थी

लावण्यहीन टकटकी में उस का एक दिन

पृथ्वी पर मेरे मन में भरी था

कहीं गए हैं

उसे बताये बिना उस के सगे कहीं गए हैं

मैं यहीं हूँ और आज के दिन

सौंदर्य के बिना रह सकती हूँ.

(2) एक दिन में आखिर

एक दिन में आखिर कितनी बार लगना है

यह अंतिम क्षण है

कितनी बार तुम्हारी ऑंखें चूमते हुए

कई जनम कोंध जाते हैं.

घास के दो हरे सांप मेरे स्वपन में लगातार रहते हैं

ये कौन हैं अस्सु मेरे बच्चे

मेरे झोले की जेब से मुंडी निकाल वे क्या मांगते हैं

यह कौन हैं मेरी माँ, जो इस समय मुझे प्रेम कर रहा है

देह की कामना करते हुए

दुःख क्यों आ रहा है बार बार हमारे पास

मैं इतना बोल क्यों रही हूँ

(3) मेरी देह पर

मेरी देह पर

तुम्हारी देह से

झिर रही हैं

पसीने के बूँदें

आने वाले ग़रीब दिनों के लिए

नमक बन रहा है

“तेजी गरोवर”

(1) हाँ, मैं तुम्हारा बच्चा हूँ

जो बच्चा मेरे भीतर है

उसे प्रकट कर दो. एक एक कर के खोल दो मेरी सारी पत्तियां

तुम नदी को जाती हो, मैं तुम्हारे पीछे पीछे आता हूँ,

मेरे नंगे पाँव बिंध जाते हैं काँटों से. तुम चुन लेती हो इन्हें भीगे चुम्बनो से.

अभी अभी कटी गेंहूँ के रूखे खेतों में मैं घूमता हूँ तुम्हारे पीछे,

यहाँ वहां छिटकी बालिओं को बीनने में तुम्हारी मदद करते हुए.

क्या यह तुम्हारी ऑखें हैं माँ? क्यों आंसू उमड़ रहे हैं इन में?

बार बार क्यों भींच रही हो तुम मुझे अपनी छातिओं से? लिली के सफ़ेद फूल मैं लाया हूँ तुम्हारे लिए, मैं पुकार रहा हूँ तुम्हें, तुम खोलती नहीं द्वार.

हाँ में तुम्हारा बच्चा हूँ. और तुम लौट रही हो सुखी जवार का गट्टर अपने सर पर उठाए

मेरी रातें बीतती हैं तुम्हारी त्वचा के भीनी सुगंध में.

(2) प्रेम मिलने के साथ

मैं ही जियूँगा अभाव

तुम्हारे साथ, तुम्हारे साथ रह कर

यह सत्य था या सुंदरता

जिसे खो दिया है मैंने

जीवन निकल गया है

हाथों से

घुमक्क्ड़ी था प्रेम मेरा. यहाँ वहां भटकता.

ढूंढता जो भीतर था. चला गया बस चला गया.

बस चला गया. उसे जाना था. शब्द शब्द जोड़ता

यूँ ही जियूँगा अभाव

जो मुझे मिल गया था प्रेम मिलने के साथ

-“रुस्तम”

(तेजी गरोवर हिंदी साहित्य जगत की एक प्रतिष्ठित हस्ताक्षर हैं. वे मध्य प्रदेश में अपने पति रुस्तम के साथ साहित्य साधना के साथ साथ कई बाल कल्याण कार्यों में और कई अन्य सामाजिक कार्यों में जुडी हैं..)

- संपादक

मनोरम जीवितं मनुष्याणाम्

भगवान् बुद्ध जब तरुण थे. जब उनकी तरुण प्रज्ञा काम क्रोध मोह के प्रति निरन्तर खड्गहस्त थी तो उन्होंने उरूवेला में शिष्यों को पावक-दीप्त उपदेश दिया था."भिक्षुओ आँखें जल रही हैं यह सारा दृश्यमान जगत् जल रहा है देवलोक जल रहा है यह जन्मान्तर प्रवाह जल रहा है. भिक्षुओ यह कौन-सी सर्वभक्षी आग है. यह कौन-सी स्वाहामयी लपट है. यह आग रूप की है. भिक्षुओं सावधान यह रूप की लपटे हैं."

परन्तु जैसे-जैसे समय बीतता गया बुद्ध की प्रज्ञा प्रखर और अनुभव-समृद्ध होती गयी और अन्तिम काल में उन्होंने अनुभव किया कि यह दृश्यमान जगत् यह रूपमय जगत् यह भवसरिता एकदम तिरस्कार की वस्तु नहीं. यह जगत् सुन्दर है क्योंकि हमें अवसर देता है महाकरुणा की अभिव्यक्ति के लिए . यदि यह दृश्यमान रूपमय जगत् न रहे तो हमारी महाकरुणा किसके उद्धार के लिए सक्रिय होगी. स्वयं-केन्द्रित अपना निजी निर्वाण पाकर हमारा धर्म शान्त हो जाएगा उसकी उदारभूमि महाकरुणा एक सम्भावना मात्र रहेगी वास्तविकता नहीं. महाकरुणा को सम्भावना से वास्तविकता के स्तर तक लाने का माध्यम है यह दुःखपीडित दृश्यमान जीव-जगत्. अतः यह रुपमय रसमय गन्धमय शब्दमय जगत् की जन्म-मरण-सरिता कम सुन्दर नहीं । लगता है यह बोध पाकर ही बुद्ध के मन के जम्बूद्वीप के प्रति एक विशेष मोह पैदा हुआ था. उन्होंने अन्तिम बार वैशाली से प्रयाण करते हुए कहा था. आनन्द अब हम फिर वैशाली को नहीं देख पाएँगे ! यही नहीं कुछ देर मौन के बाद उन्होंने कहा था चित्र...यम् जम्बूद्वीपम् । मनोरम जीवितं मनुष्याणाम् ।।" यह जम्बूद्वीप क्या ही चित्र-विचित्र रंग-बिरंग है ! और मनुष्य का जीवन कितना मनोरम है. प्रयाणवेला से कुछ दिन पूर्व बुद्ध की पकी हुई प्रज्ञा बोल रही है मनोरम जीवितं मनुष्याणाम् !"

बौद्ध ग्रन्थों में बुद्ध को जिन उपाधियों से अभिषिक्त किया है उनमें दो विशेष रूप से आकर्षित करती हैं. वे हैं महाधीवर और महाभिषज्. विश्व दुखी है सृष्टि बीमार है सभी कामना के ज्वर से पीड़ित हैं अतः भगवान् का अवतरण भिषज् या वैद्यरूप में हुआ है. दूसरी ओर बुद्ध महाधीवर हैं और आवागमन भवसरिता में जन्म-मरण की नदी में कामना के मीनों को प्रज्ञा के जाल में फँसाते हैं और मत्स्य-आखेट करते हैं. ये कामना के जलचर इस नदी के जल को अपावन मलिन और अशुद्ध कर रहे हैं. अतः बुद्ध एक धीवर हैं जो निरन्तर अखण्ड मत्स्य-आखेट कर रहे हैं. अन्यथा ये मीन प्रज्ञावारि को गन्दा जल बना डालेंगे बोधि विकारग्रस्त रहा बुद्धत्व क्षीण-दुर्बल रहा तो बुद्ध औरों के उद्धार के लिए महाभिषज् बनकर कौन-सी करुणा बाँटने में समर्थ हो सकेंगे. अतः उनके महाभिषज्तव की सार्थकता के लिए यह धीवर रूप एक अनिवार्य आवश्यकता है. बुद्ध नदी के शत्रु नहीं नदी ही तो उनकी महाकरुणा का कर्मक्षेत्र होगी. नदी जल तो मूलतः पावन है. उसे अपावन किये हुए हैं सभी काम या मार के विविध चेहरे जिन्हें काम क्रोध लोभी आदि नामों से पुकारते हैं । इस प्रकार देखते हैं कि महाधीवर और महाभिषज् परस्पर-पूरक हैं. 'बुद्ध-हृदय एक अद्भुत भाव-प्रत्यय है. बुद्ध हृदय में निहित है बोधिचक्र और बोधतक्र की नाभि है महाकरुणा. कालान्तर में 'बोधि का वरण शंकराचार्य ने किया और 'महाकरुणा का वैष्णवों ने. निर्मल-प्रसन्न भवसरिता का वरण मनुष्य जीवन का वरण 'चित्रमय रुपमय सृष्टि का वरण ही बोधिसत्त्व के जन्मान्तर-लीला की नाभि है. महायान इसी अनुभव की सन्तान है. **<u>कुबेर नाथ राय</u>**

श्रद्धांजलि

श्रद्धांजलि -1 (अमित बावा) :स्वर्ण ओमकार

अमित बावा आज दुनियां में नहीं. लेकिन उस के व्यक्तित्व का फैलाव इतना था कि वह न होते हुए भी अपने अस्तित्व का अहसास दिलाता रहता है. वह यारों का यार, शिखर का भावुक व संवेदनशील, रहम दिल और बेहद हंसमुख इंसान था. अपनी पत्नी "ज्योति बावा" के साथ उस ने "खूह बोल्दा है" नाटक लिखा, निर्देशत किया और अपार सफलता हासिल की. उस की एक कविता "एक पल" पाठकों के साथ साझा करते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है वहीँ उस की याद दिल को कचोट भी रही है-

“एक पल”

अमित बावा



वोह शाम के धुंधलके सारे के सारे मेरे हैं

चूँकि शाम का कोई साया नहीं,

चूँकि मेरा मुझ में कुछ नहीं

वोह तारों की जगमग वोह बादलों का तरन्नुम सब मेरा है.

चूँकि मैं रात हूँ,

चूँकि मैं खुद से ही छिपता हूँ.

वोह झरनों की कल कल वोह पत्थरों का संगीत सब मेरा है.

चूँकि मैं किनारा हूँ,

चूँकि मैं तबीयत से ही तनहा हूँ.

वोह रास्तों की रवानी वोह मुसाफिरों की भटकन सब मेरी है

चूँकि मैं मंज़िल हूँ,

चूँकि मेरा कोई सफर नहीं.

वोह मेरी आज की बेचैनी,

वोह मेरे अगले पल की सोच सब मेरी है

चूँकि मैं महज एक क्षण हूँ,

चूँकि मेरा कोई अगला पल नहीं

श्रद्धांजलि -2 (गुरचरण "कौन") : परमजीत चुम्बर

"अब हम कौन हो गए"

बात 3 साल पुरानी है और किस्सा 30 साल पुराना है। 30 साल पहले वह गुरचरण अरोड़ा था। फार्मेसी का छात्र अमृतसर मेडिकल कॉलेज में । मेरी उस से पहचान डॉ स्वर्ण द्वारा हुई। उस के बाद वास्तव में वह कनाडा के लिए चला गया। कई साल उस से संपर्क नहीं हो पाया। अब, 3 साल पहले। डॉ स्वर्ण वास्तव में अब डॉ स्वर्ण ओंकार बन गया था। गुरचरण ने उस से मेरा फोन लिया। उस ने मुझे फोन किया था। बात कुछ इसी तरह की ... "नमस्ते !! परमजीत क्या हाल है? "नमस्ते !! आप कौन ?" मैं सहज पूछा। वह हंसा, "ठीक है, अब हम कौन हो गए ", और उसके बाद उन्होंने बताया कि वह अपनी पत्नी, दो बेटियों, पिज्जा की दुकान के साथ वैंकूवर में है .. लेकिन उस दिन से उस ने अपना नाम रखा गुरचरण "कौन"। लिखने का कीड़ा उस में अभी भी था। हिंदी में अधिकांश लिखता था । फेसबुक पर मुझे भेजता था। अध्यात्मवाद की बातें करता था । कभी कभी उपभावुक हो जाता. डॉ ओंकार की पुस्तक "भीतर की दुनिया की एबीसी" पर उस ने बहुत लंबे चौड़ी बहस की थी. आखिर एक दिन उसकी पत्नी से फ़ोन पर एक अनहोनी खबर डॉ ओमकार को मिली। सितंबर 2015 की एक सुबह को 03:00 बजे उस ने रक्तचाप की बहुत सारी गोलियाँ खा लीं। सुबह छह बजे तक, वह हमेशा के लिए इस दुनिया से चला गया। अपनी पत्नी और दो बेटियों को छोड़कर। उस की पत्नी के अनुसार, उस दिन वह पूरी तरह से सामान्य था. लेकिन मैं हमेशा उस के कहीं गहरे अंदर हो रही हल चल को महसूस करता रहता था। मनोरोग विशेषज्ञ की तरह पर उस ने वह राज़ कभी नहीं खोला। मुझे लगता रहा वह कुछ छुपा रहा है कि लग रहा है। उस की कई रचनाओं में से एक श्रद्धांजलि के रूप में प्रस्तुत है।

हज़ारो लोग मिलते हैं मिलेंगे अब भी दुनियां में,
कोई वैसा तेरे जैसा कहाँ से लाईऐ फिर " कौन "
बहुत होंगे कहेंगे हम रहेंगे ज़िन्दगी भर साथ,
बताओ तो कहेगा जाईऐ मर जाईऐ फिर कौन
बलाओं में रही है उम्र भर ये ज़िन्दगी अपनी,
मौत जैसी बला से तो भला घबराईऐ फिर कौन
तुम्हारे साथ गुज़री है जहाँ जैसे भी गुज़री है,
कहाँ कैसे ये गुज़री है क्यों पछताईऐ फिर कौन
चले आते हैं मुहं लटकाए वापिस सब थके हारे,
ना हो मुमकिन जहां से वापसी वां जाईऐ फिर कौन
चलो अच्छा हुआ के हम ने उनके नाम की रख ली,
वरना उनके दरवाज़े पे कैसे जाईऐ फिर " कौन "



गुरचरण (बाएं) और डॉ स्वर्ण की एक पुरानी तस्वीर

आप की प्रतिक्रिया हमारे लिये अमुल्य है

हमारा यह प्रयास आप के सहयोग के बिना अधूरा है.

आप का एक मात्र सहयोग आप की प्रतिक्रिया है.

आप अपने पर्यावरण के विषय के बारे में क्या सोचते हैं.

आप तत्कालीन धार्मिक राजनीतिक व अध्यात्मिक अर्थ-तंत्र के बारे क्या राय रखते है.

पर्यावरण एवं मानवीय चेतना के बारे में आप अपना व्यक्तिगत अनुभव पाठकों से बांट सकते हैं.

इस से संबंधित आप अपनी रचना हमें भेज सकते हैं.

आप फेस बुक या इ-मेल या से भी अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकते हैं.

आप हमें बतायें कि हमारे प्रयास में क्या अधूरा है अभी

संपरक सूत्र-

इ-मेल- abcinnerworld@gmail.com

Facebook https://www.facebook.com/groups/1641827909407252/



आप की प्रतिक्रिया

'तुम्ही से' का आगामी अंक- 'ज्ञान की सीमा'

क्या ज्ञान -तकनीकी हो या अध्यात्मिक केवल मानवीय शोषण का पर्याय बन रहा है?

क्या हम मानवीय बुद्धि को केवल तथ्य संग्रहालय मान कर चल रहे हैं?

क्या हमारे विष्व-विद्यालय एवं दूसरे शिक्षा संसथान भी मानवीय बुद्धि को केवल तथ्य संग्रहालय मान कर चल रहे हैं?

क्या ज्ञान मानवीय मन को बदलने में सक्षम है या ज्ञान हो या न हो हमारा मन अपने ढंग से चलता रहता है?

दुनिया मे लगातार ज्ञान वृद्धि होने के बावजूद ईर्ष्या, द्वेष आक्रोष, अपराध भी उसी रफ़्तार से बढ़ते जा रहे हैं. क्या यह तथ्य ज्ञान की सीमा की ओर इशारा नहीं करता?

क्या ज्ञान प्रतिस्पर्धा की भावना को बढ़ा रहा है?

क्या प्रतिस्पर्धा की भावना मानवी संसाधनों के अति उपयोग और पर्यावरण अधोगति का कारण नहीं बन रही?

क्या प्रतिस्पर्धा (competition) जीवन में असुरक्षा की भावना को जन्म दे रही है जिस के चलते मनुष्य धर्म के बाहय् कर्मकांडीय रूप को जोर-शोर से अपना रहा है?



क्या तकनीकी बौद्धिक्ता पृथ्वि की एक विमीय (Linear, One-dimensional) उन्नति का कारण नहीं बन रही जिस में मानव भौतिक सुखों के बावजूद अशांति में जी रहा है?

क्या हमारे अध्यात्मवेता भी हमें तोता रटन कर्मकांडों में उलझा रहे हैं?

ज्ञान की सीमा के उस पार क्या है?

विश्लेष्ण-रहित झान व सहज झान (Intuitive Knowledge) क्या है?

ऐसे अनेक प्रष्न 'तुम्ही से' का आगामी अंक ले कर आ रहा है. इस आश्य की आप की रचनायें आप हमें मध्य फ़रवरी तक भेज सकते हैं.

संपरक सूत्र-

इ-मेल- abcinnerworld@gmail.com

हमारी फिल्मी शायरी (स्थाई स्तम्भ)

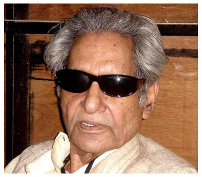
गीत को सुनना और गीत को पढ़ना दो अलग अलग प्रक्रियाएँ हैं.सुनते समय शब्द ध्वनि का रूप ले कर सीधे दिल में उतर जाते हैं. पढ़ते समय दिमाग़ व समझ के साथ मन आत्मा में प्रवेश करते हैं. मेरा आशय आज दूसरा है. दिमाग़ व समझ के साथ जुड़ने का है. यह गीत भारत भूषण द्वारा 1962 में निर्मित फिल्म 'नई उम्र की नई फ़सल' का है. इस गीत में भाव मेरी generation के लोगों के लिए हैं पर मैं यह गीत अपने young friends की नज़र कर रहा हूँ, उन को समर्पित कर रहा हूँ. ज़िन्दगी की जद्दो जहद में आप लोगों को पता भी नहीं चलेगा कि कब और कहाँ सपने ताबीर बने से पहले ही इधर उधर बिखर गए. आप ज़िन्दगी की दौड़ में केवल सफलता की खोज में रह गए. और सफलता के अर्थ आप के लिए केवल व्यवसायी सफलता ही बन कर रह गए. कई बार कुछ लोगों कि साथ ऐसा भी हुआ कि आपके कि सपनों की फसल का श्रेय कोई दूसरा ले गया. आप इस गीत को पढ़िए, दोबारा सुनिए भी और हो सके तो फिल्म भी देख लेना. जो सरोकार (कंसर्न्स) 1962 के दिनों में युवा पीढ़ी के साथ थे वे आज भी उतने ही जीवंत हैं.

फिल्मः नई उम्र की नई फ़सल

संगीतकार / Music Director: Roshan

गीतकार / Lyricist:Gopal Das Neeraj

गायक / Singer: Mohammad Rafi



Gopal Das “Neeraj”

स्वप्न झड़े फूल से मीत चुभे शूल से,

लुट गए श्रंगार सभी बाग़ के बबूल से
और हम खड़े खड़े बहार देखते रहे,

कारवां गुज़र गया गुबार देखते रहे

नींद भी खुली न थी कि हाय धूप ढल गई,

पाउं जब तलक उठे कि ज़िदगी फिसल गई
पात पात झड़ गये कि शाख शाख जल गई,

चाह तो निकल सकी न पर उम्र निकल गई
गीत अष्क बन गये छंद हो दफ़न गये,

साथ के सभी दिये धुयां धुयां पहन गये
और हम झुके झुके मोड़ पर रूके रूके,

उम्र के चढ़ाव का उतार देखते रहे. कारवां गुज़र गया...

क्या शबाब था कि फूल फूल प्यार कर उठा,

क्या कमाल था कि देख आइना सिहर उठा
इस तरफ़ ज़मीं और आसमां उधर उठा,

थाम कर जिग़र उठा कि जो मिला नज़र उठा
एक दिन मग़र यहां ऐसी कुछ हवा चली,

लुट गई कली कली घुट गई गली गली
और हम लुटे लुटे वक्त से पिटे पिटे

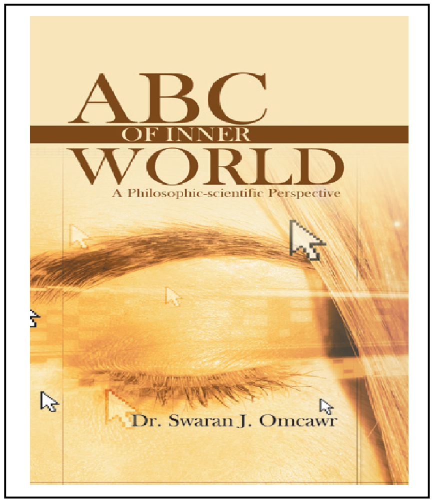
सांस की शराब का ख़ुमार देखते रहे. कारवां गुज़र गया...

हाथ थे मिले कि ज़ुल्फ़ चांद की संवर दूं, होंठ थे ख़ुले कि हर बहार को पुकार दूं
दर्द था दिया गया कि हर दुखी को प्यार दूं, और सांस यूं कि स्वर्ग भूमि पे उतार दूं
हो सका न कुछ मग़र शाम बन गई सहर,

वोह उठी लहर कि ढह गये क़िले बिखर बिखर
और हम डरे डरे नीर नयन में भरे
ओड़ कर क़फ़न पड़े मज़ार देखते रहे. कारवां गुज़र गया...

प्रस्तुति : **स्वर्ण जे. ओमकार**

अंतिम पन्ना **प्राप्त पुस्तकें**



'अंत्रीव ब्रहमण्ड का क ख ग' (ABC of Inner World) में **डा. स्वर्ण जे. ओम्कार** दो चरम सीमाओं से आध्यात्मिकता को मुक्त करने के लिए संघर्षरत हैं -पहला है कठोर बुद्धिवाद ... और दूसरा सच्चाई के केवल निष्कर्ष की पूजा प्रति हमारा लगाव. अपने अद्‌वितीय स्पष्ट दृष्टिकोण के साथ वे पाठक के मन में विचारों की एक श्रृंखला बनाने का प्रयास करते हैं. साधारण व अपरिपक्व विचारों से प्रारम्भ करके वे अधिक से अधिक जटिल विचार की ओर बढते हैं और अहसास के विस्फोट के अन्तिम शिखर तक पाठक को ले जाने का प्रयास करते हैं. प्रत्येक पाठक में ऐसा अहसास का विस्फोट पैदा हो यह निर्भर करता है कि पाठक इन विचारों को कैसे लेता है शब्दों को बुद्धि द्‌वारा समझता है या इस प्रयास के लिए उस में कोई व्यक्तिपरक जागरूकता का आविर्भाव होता है!

पाठक के मन में रचनात्मक अंतर्दृष्टि बनाने के लिए प्रस्तुत गद्‌य में आध्यात्मिकता के विषय में समकालीन बहाव पर परिच्छेद संकलित हैं. साथ ही साथ यह प्रयास है कि अनावश्यक रूप से अवांछित जानकारी से पाठक को उबायें नहीं

बल्कि व्यक्तिपरक जागरूकता के शिखर तक ले जाने के लिए उस के मन की अगुआई करें. अपने गद्‌य में अक्सर वे इस 'व्यर्थ बेतुकी गति से अग्रसर ब्रह्मांड' की अनर्थक बौद्धिक समझ को छोड़ थोड़ी देर के लिए आत्मीय अनुभूति का बोध करने का आव्हान करते हैं! अनर्थक बौद्धिक समझ के संस्थागत निर्माण के प्रयास में हम जीवन के बेहतरीन साल बरबाद करते हैं. वे ऐसे बौद्धिक मन की चरणबद्ध समाप्ति की बात करते हैं. वे चुपचाप सब समझ से परे अहसास की गहराई में प्रवेश करने की बात करते हैं!

'डा. स्वर्ण जे. ओम्कार' (ज. 1960), भारतीय मूल के लेखक और मानव शरीर विज्ञान में स्नातकोत्तर हैं. वे एक मेडिकल कालेज में एसोसिएट प्रोफेसर है. वे स्वयं शिक्षित, आत्म निर्देशित आध्यात्मिक उत्साही हैं और आम तौर पर अपने व्याख्यान में समग्रता और पर्यावरण चेतना को सम्हित करते हैं.

उपरोक्त पुस्तक निम्न लिखित ऑनलाइन बुक स्टोर्स से प्राप्त की जा सकती है.

Amazon

Flipkart